अध्याय–3
प्राचीन भारतीय मुद्रा प्रणाली के देशी तत्व

भारतीय मुद्रा प्रणाली का इतिहास विनिमय के मौद्रिक स्वरूप को छूता हुआ शैशव कालीन आहत सिक्कों की ओर बढ़ा, जिससे सुदृढ़ मौद्रिक अर्थव्यस्था को आधार मिला। मुद्रा प्रचलन की देशी विधि में, जो आहत सिक्कों में देखने को मिलती है, शासकों का नाम या उनकी आकृति अंकित नहीं होती थी और न ही किसी तरह का लेख अंकित है। लेकिन इन सिक्कों पर कुछ प्रतीक चिह्न अंकित थे जैसे– सूर्य, षडरचक्र, अर्द्धचन्द्रयुक्त पर्वत, वृषाभांकन, स्वस्तिक, उज्जयिनी चिह्न, ट्री इन रेलिंग, पशु, पक्षी, कीड़े, ज्यामितीय आकृति, धार्मिक चिह्न आदि।[1] इन सिक्कों की निर्माण विधि में भिन्नता के कारण आकर–प्रकार में भी भिन्नताऐं थीं क्योंकि जब धातु की चद्दर को कतरनी से काटकर छोटे–छोटे टुकड़े निकाल कर सिक्कों का रूप दिया जाता था, तो इनके आकार में भिन्नता स्वभावतः आ जाती थी। इसलिए ये सिक्के तिकोने, चौकोर, पंचकोण, षट्कोण, गोल, अण्डाकार आदि प्रकार के मिलते हैं।[2] आहत मुद्राओं के उपरान्त लेखरहित ढली हुई ताम्रमुद्राओं, जनपदीय व गणराज्यों की मुद्राओं का निर्माण हुआ जो आकार–प्रकार में पहले से अधिक सुडौल थीं। इसका कारण था उनका साँचे में ढाला जाना। यह सिक्के कुछ सीमा तक विदेशी तत्वों से प्रभावित रहे। यद्यपि सातवाहन मुद्राऐं विदेशी प्रभाव से मुक्त हैं तथापि उनमें मौलिकता एवं कलात्मकता का अभाव है। गुप्त कालीन प्रारम्भिक सिक्के भी विदेशी

तत्वों से प्रभावित थे लेकिन शीघ्र ही गुप्त–मुद्राऐं विदेशी प्रभाव से मुक्त हुई और राष्ट्रीय स्वरूप में निर्मित होने लगीं।

आहत सिक्के :–

विभिन्न प्राचीन भारतीय पुरास्थलों के उत्खनन से प्राप्त प्राचीन सिक्कों के वजन के विश्लेषण के आधार पर इन सिक्कों की प्राचीनता लगभग 700 ई.पू. स्वीकार की जाती है। तक्षशिला के उत्खनन के अन्तर्गत विभिन्न स्तरों से सिक्के प्राप्त हुए हैं, स्तर 2,3,4 में मिले सिक्के यद्यपि विभिन्न कालों के हैं तथापि उनमें वजन का अन्तर उतना नहीं है जितना होना चाहिए। इससे प्रतीत होता है कि इस प्रकार के सिक्के दीर्घकाल तक नियमित रूप से बनते रहे होगें। अतः उनके आद्यतन तिथि को जानने के लिए स्तर चार में मिले सिक्कों के वजन पर ही ध्यान देना उचित होगा। उस स्तर पर मिले सिक्कों का वजन उपर्युक्त सिक्के के घिसने की मात्रा से वे अपने दबे होने के समय से 280 और 220 वर्ष पूर्व जारी किये गये होगें। इस प्रकार उनके बनने का समय 800–700 ई.पू. माना जा सकता है। स्तर एक से (जिसका समय लगभग 200 ई. पू. आंका गया है) मिले सिक्के वजन में मानक वजन से 50.5 ग्रेन कम है। इसका अर्थ यह हुआ कि यह अपने दबाये जाने से कम से कम 500 वर्ष पूर्व बना होगा। इस प्रकार उसका समय भी लगभग 700 ई.पू. ठहरता है।[3] उल्लेखनीय है कि ए.एस. अल्टेकर भी भरतीय सिक्कों की प्राचीनता लगभग 800 ई.पू. के आस–पास मानते हैं।[4] इस प्रकार स्पष्ट है कि भारत में ही सर्वप्रथम सिक्कों का विकास हुआ। लीडिया व चीन ने अपने सिक्कों का आविष्कार भले ही अपने यहाँ एक दूसरे से स्वतन्त्र रूप में किया हो, उसके सिक्के भारतीय सिक्कों जितने पुराने नहीं हैं।[5]

इन अति प्राचीन भारतीय सिक्कों पर निर्माण प्रक्रिया के अन्तर्गत कतिपय प्रतीक चिह्न अंकित किये जाते थे। इन प्रतीक चिह्नों की संख्या की अधिकता के बाद भी उनके अंकन में एक विशेष सहसम्बन्ध विद्यमान है। इन प्रतीक चिह्नों को देखकर सिक्कों के क्षेत्र, राज्य, काल को सहज भाव से अलग अलग पहचाना जा सकता है।[6] बौद्धग्रन्थ विसुद्धिमग्ग में कहा गया है कि हैरण्यिक (रूप–परीक्षक) सिक्कों को देखते ही बता सकता है कि कौन सा सिक्का किस ग्राम, नगर, पर्वत या नदी तट का है और उसे बनाने वाला टकसाल कौन था।[7] इससे एक तथ्य यह भी सामने आता है कि इन सिक्कों पर अंकित प्रतीक चिह्न ही इस बात के उद्घोषक हैं कि सिक्कों का निर्माण कहाँ हुआ था, किसने किया था और कब किया था इत्यादि। यह भी सम्भावना है कि यह प्रतीक चिह्न विभिन्न सूचनायें देने के कूट रहे हों, जो सूचनायें बाद के सिक्कों पर लेखादि से दी जाने लगी। इस दृष्टि से यह सिक्के अत्याधिक गूढ़ माने जा सकते हैं। इन गूढ़ प्रतीक चिह्नों को न पढ़ पाने से ही कई प्रश्न सामने आये हैं जैसे– इन सिक्कों का निर्माता कौन था ? इनका निर्माण काल क्या था ? इत्यादि। कुछ विद्वानों का कहना है कि व्यापारियों या उनकी श्रेणियों व निगमों ने इनका निर्माण करवाया। जबकि अन्य विद्वान सिक्कों के प्रतीक चिह्नों को राज्य, वंशप्रतीक, टकसाल या नगर का प्रतीक मानते हैं। प्राप्त कुछ मुद्रानिधियों में सार्वदेशिक (साम्राज्यीय) सिक्कों के साथ स्थानिक मुद्रायें भी मिली हैं, लेकिन यह अत्यन्त घिसी अवस्था में हैं, जो यह निर्विवादित तथ्य उद्घाटित करती हैं कि स्थानिक आहत मुद्रायें साम्राज्यीय आहत मुद्राओं से पूर्व प्रचलित थीं। साहित्यिक साक्ष्यों से ज्ञात होता है कि प्राचीन भारत का सम्पूर्ण व्यापार श्रेणियों या निगमों के

संगठन पर निर्भर था। ऐसी दशा में ऐसे विद्वानों का मत तर्कसंगत लगता है कि श्रेणियां ही प्रारम्भिक आहत मुद्राओं का निर्माण कराती थीं। वैशाली, भीटा और राजघाट से प्राप्त मुद्राओं में श्रेणियों या नैगम सभाओं का उल्लेख है। आहत सिक्कों पर एक से चिह्न प्राप्त न होने का सम्भ्वतः यही कारण था कि उनका निर्माण किसी एक व्यक्ति द्वारा न होकर श्रेणी या निगमों द्वारा होता था। मौर्य साम्राज्य की स्थापना के उपरान्त मुद्रा जारी करने का कार्य राजकीय अधिकार में आ गया। कौटिलय ने कोश प्रवेश्य ;स्मह्रंस ज्मदकमतद्ध तथा व्यावहारिक ;ज्वामद डवदमलद्ध जैसे दो प्रकार के सिक्कों का उल्लेख किया है।[8] कौटिल्य ने ही सर्वप्रथम टकसाल का उल्लेख किया है, जिसका मुखिया लक्ष्णाध्यक्ष था जो मुद्राओं को चिह्नांकित करने का कार्य करता था। तीन अर्द्धवृत्ताकार पर्वत और अर्द्धचन्द्र मौर्य चिह्न था। षडरचक्र तथा सूर्य दोनों प्रतीक चिह्न मगध साम्राज्य के सिक्कों के जाने–पहचाने लाँछन हैं।[9]

आहत सिक्कों पर अंकित लाँछनों का विस्तृत विश्लेषण आवश्यक है, जिससे उनके सार्थक रूप को समझा जा सके। आरम्भ में इन सिक्कों के प्रतीक चिह्न अग्रभाग पर ही होते थे, जबकि पृष्ठभाग कोरा होता था। कालान्तर में पृष्ठभाग पर भी प्रतीक चिह्न मिलने लगे, लेकिन इस भाग के प्रतीक चिह्न अपेक्षाकृत छोटे व हल्के होते थे।[10] वस्तुतः सिक्कों पर अंकित यह चिह्न सिक्का निर्माण करने वाली संस्था की ओर से धातु की शुद्धता तथा उाचित भार की गारण्टी था। शुद्धता की जाँच के समय जाँचकर्ता सिक्के के पृष्ठभाग पर मोहर लगा देता था। यह चिह्न अत्यन्त हल्के अंकित किये जाते थे जिससे अग्रभाग के चिह्नों की सुन्दरता बनी रहे। पृष्ठभाग पर चिह्नों की अधिकतम संख्या 14 तक है, लेकिन यह चिह्न हल्के होने के

कारण अस्पष्ट हैं। जबकि सिक्कों के अग्रभाग पर पाँच प्रतीक चिह्न[11] या इससे अधिक चिह्न[12] बड़े व स्पष्ट रूप से अंकित मिलते हैं।

प्रतीक चिह्नों को समावेशित करने वाले कुछ सिक्कों के पुरोभाग पर पाँच प्रतीक चिह्नों का अंकन मिलता है, ऐसे विविध प्रकार के 152 सिक्कों की जानकारी दुर्गाप्रसाद महोदय ने दी है। इनमें से कुछ सिक्कों में चार प्रतीक चिह्न उभयनिष्ठ हैं और कुछ में तीन। लगभग सभी सिक्कों में सूर्य का अंकन है। उल्लेखनीय है कि सिक्कों पर मिलने वाले प्रतीक चिह्नों को आधार बना कर सिक्कों का वर्गीकरण किया गया है। सूर्य चित्रांकन लिये सिक्कों को प्रथम वर्ग में रखा गया है, जबकि षडरचक्र चिह्न वाले सिक्कों को द्वितीय वर्ग में रखा गया है। उल्लेखनीय है कि सूर्य तथा षडरचक्र तान्त्रिक प्रतीक माने गये हैं। लेकिन एलन का मानना है कि सूर्य उच्चतम अधिकारी का, शंख व चक्र आदि राजा के बाद के कर्मचारी के और बाद में बदलने वाले चिह्न उसके चलाने वाले के द्योतक हैं। आपसी सदृश्य रखने वाले पशुचिह्न तथा पर्वत चिह्न वाले सिक्कों को तीसरे वर्ग में रखा गया हैं चौथा समूह चिह्न लगभग अपने ही वर्ग तक सीमित है। वृषभांकन एक से अधिक वर्ग के सिक्कों पर प्राप्त होता है। वस्तुतः वृषभ शक्ति[13] का प्रतीक माना जाता है इसका अंकन अति प्राचीन है क्योंकि सिन्धु सभ्यता से प्राप्त मुहरों पर इसका अंकन सामान्तया होता था। पाँचवां प्रतीक चिह्न समूह सर्वाधिक पाया जाता है, इसके अन्तर्गत पी.एल. गुप्ता को अमरावती मुद्रानिधि से 71 चिह्न प्राप्त हुए हैं।[14] यह प्रतीक चिह्न विभिन्न प्रकार, वर्ग व समूह के सिक्कों पर मिलते हैं। इन प्रतीक चिह्नों में कुछ चिह्न एक वर्ग के सिक्कों पर भी पाये जाते हैं किन्तु इन्हीं में कुछ दूसरे वर्ग के सिक्कों पर नहीं थे।

इस प्रकार दूसरे वर्ग से सम्बन्धित सिक्कों पर कुछ नये तथा पुराने दोनी भाँति के चिह्न मिलते हैं। इसी तरह तीसरे वर्ग के सिक्कों पर भी कुछ नये प्रतीक चिह्न भी प्राप्त होते हैं। उपरोक्त तथ्यों के आधार पर सहज ही यह निष्कर्ष दिया जा सकता है कि पाँचवें प्रतीक चिह्नों में कुछ एक निश्चित समय तक प्रचलित थे, किन्तु कालान्तर में उनके स्थान को नये चिह्नों ने ग्रहण कर लिया और यह भी कुछ समय तक विद्यमान रहे, इसके बाद कुछ नये चिह्नों ने इनका भी स्थान ग्रहण कर लिया। यदि सिक्कों पर प्राप्त होने वाले विविध प्रतीक चिह्नों का विश्लेषणात्मक अध्ययन तिथि–अनुक्रम को लक्ष्य बनाकर किया जाय तो सकारात्मक परिणम अवश्य आयेंगे। अतः वैज्ञानिक विधि से प्रतीक चिह्नों के आधार पर सिक्कों के तैथिक अध्ययन को अध्ययन का विषय बनाया जाना चाहिए। अमरावती, गुल्वर्ग तथा भीर के टीले से ऐसे सिक्के भी प्राप्त हुए हैं जिन पर छठे प्रकार का चिह्न भी अंकित है। इनमें से कुछ सिक्कों पर चार गेंद एक संकीर्ण आयत में पंक्तिबद्ध हैं, जबकि कुछ सिक्कों में चार वृत्त एक आयत में पंक्तिबद्ध हैं। इन प्रतीक चिह्नों के अंकन का उद्देश्य एवं प्रकृति निश्चित नहीं है लेकिन यह सुनिश्चित है कि विभिन्न अवसरों पर इन चिह्नों का अंकन होता था। बहुत से एसे भी सिक्के हैं जिनके दोनों भागों पर पांच चिह्न वाला समूह अंकित है। एक भाग का चित्राकंन दूसरे भाग की अपेक्षा अधिक घिसा हुआ तथा प्राचीन है। इससे यह निष्कर्ष सहज ही निकलता है कि यह सिक्के मूलरूप से दो बार प्रचलित किये गये। प्राचीन चिह्न समूह पूववर्ती काल का तथा दूसरी ओर नवीन प्रतीक चिह्नों का अंकन अनुवर्ती काल में होने का आभास देता है। इस प्रकार दो बार जारी किये जाने वाले सिक्के वाल्श को सर्वप्रथम भीर के टीले से प्राप्त हुए

हैं। अमरावती–निधि से पी.एल. गुप्ता को ऐसे 96 सिक्के[15] तथा रामपुर–निधि से दो सिक्के प्राप्त हुए हैं।

यह तथ्यपरक है कि रजत मुद्रा कार्षापण 800 ई.पू. के पहले नहीं रखी जा सकती[16] लेकिन ताँबे के गोल व वर्गाकार सिक्के जिनके एक ओर हाथी या अर्द्धचन्द्र पर्वत तथा दूसरी ओर पंक्तिबद्ध पेड़ अथवा खोखला क्रास चिह्न जो सम्पूर्ण गंगा के मैदानों में प्रचलित थे कार्षापण के पूर्ववर्ती हो सकते हैं। ए.एस. अल्टेकर ने कहा है कि जिन सिक्कों पर अर्द्धचन्द्राकार प्रतीक चिह्न हैं और जो गंगा के मैदान में सामान्यतया प्रचलित थे, मौर्य राजवंश की तरह किसी बड़े साम्राज्य द्वारा जारी किये गये थे। उनका आगे कहना है कि अधिक सम्भव है कि इन सिक्कों पर राजकीय चिह्न सुमेरू पर्वत द्वारा अनुप्रमाणित हैं। लेकिन साक्ष्यों के अभाव के कारण इन सिक्कों के तिथिक्रम से सम्बन्धित कोई निष्कर्ष निकालना कठिन हो जाता है। यद्यपि पी.एल. गुप्ता ने इन सिक्कों के काल निर्धारण के लिए सुझाव प्रस्तुत किये हैं। सामान्यतया पर्वत चिह्न वाले सिक्के प्रागमौर्य कालीन हैं, जबकि पर्वत पर मोर अंकन वाले सिक्के मौर्य कालीन माने जा सकते हैं।

आहत मुद्रायें देश के विभिन्न क्षेत्रों में पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध हैं इनके विस्तृत प्रसार के कारण इसे भारत का राष्ट्रीय सिक्का कहा जा सकता है। पश्चिमोत्तर भारत में तक्षशिला के भीर टीले से 1167 सिक्के मिले हैं जिनमें कुछ यूनानी सिक्के भी हैं। पेशावर व रावलपिण्डी से भी आहत सिक्के प्राप्त हुए हैं। उत्तर भारत में पंजाब के कांगड़ानिधि से आहत सिक्के मिले हैं जिनमें अन्तियोक व मिलिन्द के भी सिक्के हैं। बिहार में मछआ टोली, गोलकपुर, गोरहवा घाट, बेलवा, पाटलिपुत्र

तथा मसौढ़ी से पर्याप्त मात्रा में आहत सिक्के मिले हैं। उत्तर प्रदेश के कौशाम्बी निधि से पूर्वमौर्य कालीन 80 ग्रेन के सिक्के, पैलानिधि (खीरी) से 1245 सिक्के जिनमें से अधिकतर 40 ग्रेन के हैं। मिर्जापुर व गाजीपुर से भी आहत सिक्के प्राप्त हुए हैं। इसके अतिरिक्त अयोध्यानिधि से 500 सिक्के प्राप्त हुए हैं। राजस्थान में उदयपुर, जयपुर, नागरी (ताबंवती नगरी) मध्य प्रदेश में शारंगपुर (विदिशा) उज्जयिनी आदि स्थानों से आहत मुद्रायें प्राप्त हुई हैं। इसी प्रकार दक्षिण भारत में कोल्हापुर, त्रिचनापल्ली, कोयम्बटूर आदि स्थानों से आहत मुद्रायें मिली हैं। इन भाारतीय स्थानों के अतिरिक्त अफगानिस्तान में भी आहत मुद्रायें प्राप्त हुई हैं, वासुदेव उपाध्याय का मानना है कि विभिन्नताओं की उपस्थिति में भी समस्त भारत के अहात सिक्के मूलतः एक ही हैं। इससे प्रकट होता है कि सारे भारत में एक ही प्रकार का सिक्का प्रचलित था। यानी सांस्कृतिक क्षेत्र में भारत एक इकाई है। भौगोलिक दृष्टि से विभेद होते हुए भी भारत में एकता की भावना है।[18]

प्रतीक चिह्नों के सम्भावित अर्थ :–

आहत मुद्राओं की भाँति उन पर अंकित चिह्नों का स्वरूप भी विशुद्ध भारतीय था। इन सिक्कों पर अंकित प्रतीक चिह्न भारतीय समाज, संस्कृति, धर्म एवं दर्शन से कहीं न कहीं अवश्य जुड़े हैं। आहत सिक्कों में अंकित "वृत्त में विन्दू" को परम ब्रह्म तथा शिव का प्रतीक माना गया है। इसी प्रकार पशुओं का चित्रांकन भी धर्म प्रेरित है क्योंकि पशुओं के चिह्न उन देवताओं के प्रतीक है, जिनके वे वाहन माने जाते हैं, उदाहरण के लिए हाथी इन्द्र देवता का वाहन होने के साथ–साथ श्रेष्ठ शक्ति का

प्रतीक था। इसी प्रकार शेर बहादुरी व निर्भीकता का प्रतीक था।[19] आहत सिक्कों पर चित्रांकित नन्दी शिव का प्रतीक माना गया है। अपने सिक्कों पर शिव वाहन को स्थान देकर मुद्राशिल्पियों ने स्वयं को गौरवान्वित महसूस किया होगा। इसी प्रकार मोर युद्ध देवता शिवपुत्र कार्तिकेय का वाहन है, इसे सिक्कों पर चित्रांकित करके सैन्य सफलता की कामना की गयी होगी। सूर्य तथा षट्कोण तान्त्रिक प्रतीक माने गये हैं। वासुदेव उपाध्याय का मत है कि यह चिह्न धर्म से सम्बद्ध थे, सूर्य वृक्ष, नन्दी आदि ब्राह्मण धर्म से और चक्र (धर्म चक्र) तथा पीपल वृक्ष बौद्ध धर्म से सम्बन्धित थे। वृक्ष पूजा के प्रमाण सैन्धव सभ्यता[20] ऋग्वेद[21] अर्थववेद[22] ऐतरेय ब्राह्मण[23] छान्दोग्य उपनिषद्[24] में प्राप्त होते हैं। जो सैन्धव सभ्यता से लेकर आज तक वृक्ष पूजा की निरन्तरता प्रमाणित करते हैं। एस.के. चक्रवर्ती का मानना है कि पाँच प्रतीक चिह्नों में प्रथम दो अर्थात सूर्य व षड्रचक्र सम्भवतः धार्मिक महत्व के हैं तथा तीन परिवर्तित होने वाले चिह्नों में से एक चिह्न प्रचलन स्थान का, दूसरा टकसाल का तथा तीसरा चलाने वाले अधिकारी का द्योतक है। लेकिन डी.डी. कोशाम्बी का कहना है कि कुछ प्रतीक चिह्न सार्वजनिक महत्व के हैं, विशेष महत्व के नहीं। अन्य चिह्नों में शंख, चक्र राजवंश का प्रतीक है, पर्वतों पर अर्द्धचन्द्र परिवार का प्रतीक या गण चिह्न है। चौथा चिह्न मुद्रा प्रचलित करने वाले शासक और पाचवाँ चिह्न मुख्य अधिकारी का प्रतीक है। अन्ततः यह निर्विवाद है कि भारतवर्ष के प्राचीनतम सिक्के किसी भी विदेशी तत्व से प्रभावित नहीं थे उनका विषय विशुद्ध भारतीय था।

लेखरहित ढली ताम्रमुद्रायें :

प्राचीन भारतीय मुद्रा सम्बन्धी इतिहास उत्तरोत्तर विकासोन्मुख रहा, आहत सिक्कों के उपरान्त इसी क्रम में लेखरहित ढली हुई ताम्रमुद्राओं का नाम लिया जा सकता है। जैसा कि नाम से ही विदित होता है कि यह ताम्रमुद्रायें कई बातों में आहत सिक्कों से भिन्न थीं, जैसे इनका निर्माण आहत प्रणाली से न करके साँचों में ढाला गया फलतः इनके आकार प्रकार में सुदृढता आयी। इन ढली मुद्राओं में प्रयुक्त धातु ताँबा ही रहा। इन सिक्कों के निर्माण में दोहरे साँचे का प्रयोग किया गया यही कारण है कि इनके दोनों पटों पर लाँछन अंकित हो सके।[25] यद्यपि इन ढली हुई ताम्रमुद्राओं तथा आहत सिक्कों के मध्य कुछ समानतायें भी दृष्टिगोचर होती हैं। यह ताम्रमुद्रायें आहत सिक्कों की ही भांति लेख विहीन हैं और अनेकों प्रतीक चिह्न जो इन सिक्कों पर चित्रांकित हैं वे आहत सिक्कों से समानता रखते हैं। पी.एल. गुप्ता ने यहाँ तक कहा है कि इन ढलित सिक्कों के प्रतीक चिह्न मौर्य कालीन प्रतीक चिह्नों के अनुकरण जान पड़ते हैं।[26] यद्यपि कौटिल्य के अर्थशास्त्र में ढले सिक्कों की कहीं चर्चा नहीं है। ढली हुई ताम्र मुद्राओं की जानकारी का मुख्य आधार एलन द्वारा प्रस्तुत ब्रिटिश संग्रहालय की मुद्रा सूची है।[27] लेखरहित ताम्रमुद्रायें अधिकांशतः चौकार हैं जिनका वजन 10 ग्रेन से लकर 100 ग्रेन तक है। प्रचलन में ताँबे के सिक्के अन्य धातुओं की अपेक्षा अधिक घिसते है तथा भूमि में दबे रहने के कारण उन पर वातावरण का जो प्रभाव पड़ता है, उससे भी धातु मात्रा मे ह्यस होता है। इस कारण इन सिक्कों के मानक भार का अनुमान नहीं किया जा सकता है।[28] यह ढलित सिक्के बंगाल, बिहार, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश के मध्य सीमित हैं। वे स्वयं में अनेकों प्रतीक

चिह्न समाहित किये हैं जैसे– गज आकृति, चैत्य, वृक्ष, अर्द्धचन्द्रयुक्त पर्वत, पताका, स्वस्तिक, अर्द्धचन्द्र से घिरा बिन्दु, रिक्त वर्ग, वृषभ मुख, ब्राह्मी लिपि के 'स' ( ) के समान प्रतीक चिह्न, अर्द्धचन्द्रयुक्त पर्वत के पार्श्ववर्ती वृषभ आदि। उपरोक्त प्रतीक चिह्नों में से अधिकांश का प्रतीकार्थ आहत सिक्कों के वर्ग में वर्णित किया जा चुका है। इन प्रतीक चिह्नों के आधार पर ताम्रमुद्राओं को चार वर्गों में रखा जा सकता है।

प्रथम वर्ग

इस वर्ग के सिक्कों के पुरोभाग पर लक्ष्मी अभिषेक का अंकन मिलता है, जबकि पृष्ठभाग पर गजाकृत, चैत्य, वृक्ष एवं सोपान का अंकन प्राप्त होता है।

द्वितीय वर्ग

इस वर्ग की मुद्राओं के पुरोभाग पर राजप्रासाद तथा वृक्षाश्रित स्त्री का अंकन हुआ हैं और पृष्ठभाग पर चैत्य वृक्ष चित्रांकित है।

तृतीय वर्ग–

पताका, स्वस्तिक, अर्द्धचन्द्र से घिरा विन्दु रिक्त वर्ग का अंकन इस वर्ग के सिक्कों के पुरोभाग पर मिलता है जबकि पृष्ठतल वृषभ मुख, अर्द्धचन्द्रयुक्त पर्वत से चित्रांकित है।

चतुर्थ वर्ग–

इस वर्ग के सिक्कों के पुरोभाग पर रिक्त वर्ग, अर्द्धचन्द्रयुक्त पर्वत, ब्राह्मी लिपि के अक्षर 'स' ( ) के समान चिह्न और पृष्ठतल पर चैत्य वृक्ष, अर्द्धचन्द्रयुक्त पर्वत के पार्श्ववर्ती वृषभ मुख का अंकन मिलता है।

प्रथम वर्ग के सिक्कों के पुराभाग पर लक्ष्मी के अभिषेक का चित्रांकन, द्वितीय वर्ग के सिक्कों के पुरोभाग पर राजप्रासाद तथा वृक्षाश्रित स्त्री का अकं आदि विशेष उल्लेखनीय हैं क्योंकि ऐसे चिह्न आहत सिक्कों में देखन को नहीं मिलते हैं। ये अंकन सिक्कों के विकास को प्रदर्शित करते हैं। लेखरहित ढली हुई ताम्रमुद्राओं का कालनुक्रम कुमरहार (पटना) हस्तिनापुर तथा कौशाम्बी के उत्खनन से प्राप्त ताम्रमुद्राओं के विश्लेषण के आधार पर निकाला गया है। कुमरहार तथा हस्तिनापुर के उत्खनन स्तर से उपलब्ध इन सिक्कों का समय छठी शताब्दी ई. पूर्व. से पाँचवी शताब्दी ई.पूर्व. के मध्य मिलता है। पाटलिपुत्र उत्खनन से यह ढली हुई ताम्र मुद्रायें तथा आहत सिक्के साथ–साथ मिले हैं जिनका समय चौथी शताब्दी ई.पूर्व. माना गया है।[30] जबकि कौशाम्बी उत्खनन के जिस स्तर से यह सिक्के प्राप्त हुए हैं उसका समय 1000 ई. पूर्व. से 900 ई. पूर्व. के मध्य माना गया है।

अन्ततः हमें यही निष्कर्ष प्राप्त होता है कि अधिकांश उत्खनित पुरास्थलों से उपलब्ध आहत सिक्कों की प्राचीनता सिद्ध होती है, कुछ स्थानों से प्राप्त लेखरहित ढली ताम्र मुद्रायें ही अपेक्षाकृत प्राचीन सिद्ध हुई हैं। जबकि ऐसे भी कुछ स्थान हैं जहाँ से आहत व लेखरहित ताम्र मुद्रायें साथ–साथ प्राप्त हुई हैं। आहत सिक्कों की ही भाँति लेखरहित ढली ताम्र मुद्राओं के प्रतीक चिह्न भी विशुद्ध भारतीय समाज, संस्कृति, धर्म एवं दर्शन से ही अंगीकृत किये गये थे।

जनपदीय मुद्रायें :–

चन्द्रगुप्त मौर्य ने प्राचीन भारतीय राजनैतिक विकेन्द्रीकरण को विराम देते हुए एक विशाल साम्राज्य की स्थापना की। साम्राज्यिक सत्ता की इस परम्परा का निर्वाह

शुंग साम्राज्य के संस्थापक पुष्यमित्र शुंग ने भी किया, लेकिन शुंग साम्राज्य के पतन के बाद पुनः राजनैतिक विकेन्द्रीकरण का बोलबाला हो गया। इस राजनैतिक विकेन्द्रीकरण को समुद्रगुप्त की दिग्विजय ने विराम दिया अर्थात द्वितीय शताब्दी ई.पू. से लेकर तीसरी शताब्दी ई. तक जनपदीय सत्तायें ही विद्यमान रहीं।[31] इस सुदीर्घ शासन परम्परा में विभिन्न जनपदों के विभिन्न शासकों ने अपनी–अपनी मुद्रायें भी प्रचलित कीं। इन जनपदों में मुख्यतया कौशाम्बी, तक्षशिला, मथुरा, कोशल, पांचाल, एरण, उज्जैन, विदिशा तथा महिष्मती इत्यादि का नाम उल्लेखनीय है।[32] उत्तर प्रदेश, पंजाब, राजस्थान व मध्य प्रदेश आदि से जनपदीय मुद्रायें प्राप्त हुई हैं जो मुख्यतयः ताम्र निर्मित हैं, रजत मुद्रायें बहुत कम संख्या में उपलब्ध हैं।

इस संदर्भ में उल्लेखनीय है कि इन भारतीय सिक्कों पर लेख भी मिलने लगे जो कि विदेशी सिक्कों की परम्परा रही है। यद्यपि लेखरहित मुद्रायें भी प्राप्त हुई हैं जिन पर अंकित प्रतीक चिह्न आहत मुद्राओं के प्रतीक चिह्न से समानता रखते हैं, ऐसी मुद्रायें वर्गाकार एवं आयताकार स्वरूपों में मिली हैं। कुछ सिक्कों पर पाँच तो कुछ पर चार प्रतीक चिह्नों का अंकन प्राप्त होता है। पी.एल. गुप्ता मानते हैं कि ऐसी मुद्राओं का प्रचलन पुष्यमित्र शुंग ने किया होगा।[33] विदिशा में भी पुष्यमित्र शुंग के उत्तराधिकारियों ने इसी प्रकार के प्रतीक चिह्नों वाली मुद्रायें जारी की थीं। आहत मुद्राओं के अनुकरण पर बनायी गयी कुछ ताम्र मुद्रायें मथुरा के सोंख तथा मौर्यकालीन रजत आहत मुद्राओं के प्रतीक चिह्नों की पुनरावृत्ति करने वाली कतिपय ताम्र मुद्रायें राजस्थान के नागरी नामक स्थान से प्राप्त हुई हैं। गांधार से प्राप्त कुछ पूर्ववर्ती सिक्कों पर आहत मुद्राओं के सामान चिह्न मिलते हैं, लेकिन उत्तरवर्ती

सिक्कों पर पशु–आकृतियों के अंकन की अधिकता देखने को मिलती है। कौशाम्बी से मिले सिक्कों के अग्रभाग पर सुमेरू पर्वत, वृक्ष आदि चिह्न प्राप्त होते हैं। पी.एल. गुप्ता ने लेखों के आधार पर लेखयुक्त मुद्राओं का वर्गीकरण करते हुए नागर सिक्के, जनपदीय सिक्के तथा वैयक्तिक सिक्कों में विभक्त किया है। नगर–नामांकित यह नागर सिक्के गांधार, वाराणसी, कौशाम्बी, श्रावस्ती, राजस्थान, त्रिपुरी, विदिशा, महिष्मती से मिले हैं।

अयोध्या से प्राप्त सिक्के–

कोशल महाजनापद के सिक्के अयोध्या से प्राप्त हुए हैं। अयोध्या पौराणिक नाम है प्रारम्भ में इसे साकेत नाम से जाना जाता था, जिसके अन्तर्गत अयोध्या तथा फैजाबाद का क्षेत्र आता है। अयोध्या से प्राप्त आद्यतन सिक्के ढलित व चौकोर हैं, जिन पर मूलदेव, धनदेव, विशाखदेव, वायुदेव आदि नाम पढ़े गये हैं। इनमें से कुछ सिक्कों पर वामाभिमुख वृषभ और कुछ पर खड़ी गजलक्ष्मी का अंकन तथा पटभाग पर अनेक प्रतीक चिह्न हैं जो लगभग सभी पर समान हैं। सिक्कों के ढले होने के कारण इन पर चित्राकंन बहुत खराब है, जिससे इनके प्रतीक चिह्नों का स्पष्ट विवेचन सम्भव नहीं है। इसके अतिरिक्त सत्यमित्र, विजयमित्र, आर्यमित्र तथा देवमित्र के सिक्के मिले हैं।[34] इन सिक्कों पर अंकिन राजाओं के नाम के अन्त में "मित्र" शब्द पर अपना विचार देते हुए कनिंघम कहते हैं कि ऐसा प्रतीत होता है कि मित्र नामधारी पांचाल शासकों का साम्राज्य विस्तार अयोध्या तक था। देवमित्र का केवल एक सिक्का मिला है।[35] इसके अग्रभाग पर ध्वज के सम्मुख वृषभ है तथा नीचे ब्राह्मी लिपि में देवमित्र लिखा है।[36] इसी सिक्के के पृष्ठतल पर मोर तथा ताड़ का वृक्ष

अंकित है।[37] यद्यपि कनिंघम[38], स्मिथ तथा एलन[40] इस चिड़िया को कुक्कुट बताते हैं। इसके अतिरिक्त कुछ अन्य सिक्कों पर नन्दी, हस्ति, स्वस्तिक तथा उपर ब्राह्मी लिपि में राजा का नाम और पृष्ठतल पर सूर्य, वृक्ष, त्रिशूल, लक्ष्मी आदि प्रतीक चिह्नों का अंकन किया गया है। इस जनपद की मुद्राओं का प्रचलन काल ई.पू. 200 से लेकर 200 ई. तक निर्धारित किया गया है। कुमुदसेन, अयवर्मन के सिक्कों के पुरोभाग में रेलिंग से घिरा वृक्ष और इसके बायीं ओर खड़ा वृषभ चित्रांकित है। आयुमित्र देवमित्र, संघमित्र और विजयमित्र की मुद्राओं के पुरोभाग पर वृषभ के सामने एक खड़ी रेखा को क्रमशः छोटी होती तीन रेखायें काटती हुई दिखायी गयी हैं। सभी राजाओं के सिक्कों के पृष्ठतल पर हंस, मयूर, मुर्गा, त्रिशूल, नन्दी, या ननदिपद या एक टेढ़ी रेखा के ऊपर ताड़पत्र आदि प्रतीक प्राप्त होते हैं। अधिक सम्भव है कि वृषभ अयोध्या का राजचिह्न रहा हो क्योंकि राजा बदलते रह लेकिन वृषभ का अंकन नहीं बदला।

कौशाम्बी से प्राप्त सिक्के :-

वर्तमान इलाहाबाद नगर के दक्षिण-पश्चिम 48 किलोमीटर दूर यमुना के समीप स्थित कोसम नाम स्थान का समीकरण वत्स जनपद की राजधानी कौशाम्बी से स्थापित किया गया है।[41] यहाँ से प्राप्त विभिन्न प्रकार के सिक्के भी प्रमाणित करते हैं कि यह एक व्यापारिक नगर था। कौशाम्बी से प्राप्त ताँबे के सिक्कों की परम्परा ई. पू. तीसरी शताब्दी से प्रारम्भ होकर लगभग 300 वर्षों तक चलती रही। दूसरी शताब्दी ई.पू. पांचाल (अहिच्छत्र) तथा वत्स (कौशाम्बी) जनपद एक ही वंश की दो शाखाओं द्वारा शासित थे, जो शुंगों के अधीन थीं।[42] एलन ने अपने कैटलॉग में कौशाम्बी के केवल चार मित्र नामधारी शासकों के नाम जोड़े हैं जिनके नाम हैं- ब्रहस्पतिमित्र,

वरूणमित्र, शिवमित्र, पथमित्र।[43] अग्रराज, ईश्वरमित्र, प्रजापतिमित्र प्रोष्ठमित्र, प्रियमित्र, सर्वमित्र, वरूणमित्र आदि नामित सिक्कों का पता ए.एस. अल्टेकर ने लगाया।[44]

कौशाम्बी से प्राप्त प्रारम्भिक मुद्रायें ढली हुई हैं। बिना लेख वाली सभी मुद्राओं को तीसरी शताब्दी ई.पू. का माना जा सकता है। कौशाम्बी, पांचाल तथा अयोध्या की अन्तिम मुद्राओं में बहुत समानता है। मौद्रिक साक्ष्य बताते है कि मौर्यों के पतन के बाद कौशाम्बी क्षेत्र पर शुंगो का अधिकार हो गया। कौशाम्बी का प्रारम्भिक शासक शुंगवर्मा था जिसका काल दूसरी शताब्दी ई.पू. के मध्य था।[45] इस शासक का एक ताँबे का सिक्का मिला है, जिस पर ब्राह्मी लिपि में "शुगवामस" लिखा हैं और एक यूप के पास घोड़े को दिखाया गया है।[46] इस दृश्य का समीकरण पुष्यमित्र शुंग के अश्वमेघ यज्ञ से स्थापित किया जा सकता है। इसके उपरान्त मघवंश ने शासन किया। भीमसेन मघ कौशाम्बी का पहला मघ शासक था जिसका क्षेत्र कौशाम्बी से बान्धवगढ़ (जिला–शहडोल म०प्र०) तक था। इसने ताँबे के सिक्कों पर "राजा" की उपाधि अंकित की।[47] इसके अतिरिक्त इलाहाबाद के जनेश्वर दास ने इसके दर्जन भर ताँबे के सिक्के प्रस्तुत किये हैं। इन सिक्कों के पुरोभाग पर घेरे में वृक्ष और ब्राह्मी लिपि में "राजा भीमसेन" लिखा है जबकि दूसरी ओर खड़े वृषभ का अंकन मिलता है। एक सिक्के में "महाराजा भीमसेन" लेख अंकित है।[48] ए.एस. अल्टेकर ने शिवमघ, भद्रमघ सतमघ, विजयमघ, पूरमघ के सिक्कों की पहचान की है।[49] पुरावश्री वंश का अन्तिम शासक था जिसे समुद्रगुप्त ने पराजित कर कौशाम्बी पर अधिकार कर लिया।

कौशाम्बी से प्राप्त सिक्कों के प्रतीक चिह्नों में दो चिह्नों के मध्य घेरे में वृक्ष, मालवा चिह्न, लक्ष्मी का अंकन जिसके समक्ष सूड़ ऊपर किये हाथी का अंकन है, छः मेहरात्रों वाला पर्वत, आठ किरणों से युक्त चक्र, नन्दिपद, सर्प या नदी, दो स्तम्भों के मध्य हाथी, कमर पर हाथ रखे पुरूष आदि। उपरोक्त प्रतीक चिह्नों में कुछ मुद्रायें लेख रहित हैं जो लेख युक्त मुद्राओं की अपेक्षा प्राचीन हैं। धनदेव की घेरे में वृक्ष तथा वृषभ प्रकार की मुद्रायें अधिक संख्या में प्राप्त हुई हैं जो उसके दीर्घ कालीन शासन का परिचय देती हैं।

पांचाल से प्राप्त सिक्के :–

पांचाल जनपद के मध्य भाग से गंगा नदी प्रवाहित होती थी, जिसके कारण पांचाल दो भागों में बँट गया था। उत्तरी पांचाल की राजधानी अहिच्छत्र (रामनगर–बरेली) तथा दक्षिणी पांचाल की राजधानी काम्पिल्य (बदायूँ के पास) थी। यहाँ से प्राप्त मुद्राओं की लिपि के आधार पर उनका समय 200 ई.पू. से पहली शताब्दी ई. के मध्य रखा गया है। पांचाल से प्राप्त ताँबे के सिक्कों पर रूद्रगुप्त, जयगुप्त, दामगुप्त, बंगपाल, विश्वपाल, यज्ञपाल, वसुसेन, युगसेन, रूद्रघोष, भद्रघोष, सूर्यमित्र, विष्णुमित्र, ध्रुवमित्र, इन्द्रमित्र, अग्निमित्र, भानुमित्र, भूमिमित्र, जयमित्र, फाल्गुनीमित्र, ब्रह्स्पतिमित्र, अनुमित्र, आयुमित्र, वरूणमित्र, प्रजापतिमित्र, अश्वमित्र, विश्वमित्र, ज्येष्ठमित्र, शिवनन्दी, श्रीनन्दी और अच्यु आदि के नाम प्राप्त होते हैं। एलन ने 1936 में तेरह पांचाल शासकों के सिक्के प्रकाशित किये।[50] इसके बाद सात और शासकों के सिक्के प्रकाशित किये यह हैं– वसुसेन[51], दासमगुप्ता[52], प्रजामित्र[53], यजनपाल[54], वरूणमित्र[55], शिवनन्दी[56], युगसेन[57], रूद्रघोष[58], अनमित्र[59] तथा श्रीनन्दी[60]।

अधिकांश राजाओं के नाम के अन्त में मित्र शब्द मिलता है जो यह भी संकेत करता है कि पांचाल में मित्रवंश का राज्य था। इन मुद्राओं के अग्निमित्र और शुंगवंश राजा अग्निमित्र को एक मानकर अपर्याप्त तथ्यों के आधार पर इन मुद्राओं को एक मानकर अपर्याप्त तथ्यों के आधार पर, इन मुद्राओं का शुंगवंश से सम्बन्ध जोड़ा जा सकता है। इस तथ्य के समर्थन या विरोध में पर्याप्त प्रमाण उपलब्ध नहीं हैं।

यहाँ से प्राप्त ताँबे के गोलाकार सभी मुद्राओं का निर्माण ठप्पे द्वारा किया गया है। इनके अग्रभाग पर तीन चिह्नों का समूह और ब्राह्मी लिपि में राजा का नाम प्राप्त होता है। बायीं ओर घेरे में वृक्ष, मध्य में परस्पर गुथे हुए नागों द्वारा रक्षित शिवलिंग हैं जबकि दाहिनी ओर सर्पो द्वारा बनाया गया कोई वृत्ताकार चिह्न है। पृष्ठतल पर सिक्का जारी करवाने वाले शासक से सम्बन्धित किसी देवी–देवता की आकृति या उससे सम्बन्धित चिह्न–सूर्य, चक्र, त्रिशूल कुल्हाड़ी, नन्दिपद, हवनकुण्ड आदि। सूर्यमित्र व भानुमित्र के सिक्कों पर किसी ऊँचे आाधार पर रखा सूर्य का चिह्न है। अग्निमित्र के सिक्कों पर पुरूषाकृति के सिर से पाँच किरणें दिखायी गयी हैं। यह आकृति वेदिकायुक्त हवनकुण्ड पर खड़ी है। रूद्रघोष के सिक्कों पर तीन पांचाल चिह्न तथा ब्राह्मी लिपि में रादाघो (त्कंहीव) लिखा है।[61] विष्णुमित्र के सिक्कों का प्रतिनिधित्व लगभग प्रथम शताब्दी ई.पू. विष्णु ने किया। इसके सिक्कों पर चार भुजाओं वाले पुरूष की आकृति है जो निश्चित रूप से विष्णु की है।[62] अच्युत के सिक्कों पर एक ओर चक्र और दूसरी ओर ब्राह्मी में अच्यु लिखा है।[63] इस प्रकार पांचाल से प्राप्त सिक्के भी भारतीय संस्कृति के तत्वों को ही स्वयं में समाहित किये है उनमें किसी विदेशी तत्वों को नहीं अपनाया गया है।

मथुरा से प्राप्त सिक्कें :–

यमुना नदी के किनारे आगरा से लगभग 56 कि.मी. उत्तर प्राचीन शूरसेन महाजनपद विद्यमान था, इसकी राजधानी मथुरा थी।[64] मथुरा से प्रचुर मात्रा में प्राचीन मुद्रायें प्राप्त हुई हैं। जिनमें लगभग एक दर्जन हिन्दू राजाओं के नाम मिलते हैं, जिन्होंने शुंगकाल में शासन किया था। भवदत्त, उत्तमदत्त, पुरूषदत्त, रामदत्त, शेषदत्त, कामदत्त, शिवदत्त, शिशुचन्द्रदत्त, गोमित्र, विष्णुमित्र, ब्रह्ममित्र, सूर्यमित्र, दृढ़मित्र तथा बलभूति नामांकित मुद्रायें प्राप्त हुई हैं।[65] मथुरा से प्राप्त देशी राजाओं के सिक्कों को तीन वर्गों में विभाजित किया जा सकता है। प्रथम वर्ग के अन्तर्गत तीसरी शताब्दी की "उपातिक्या" लेख वाले सिक्कों को रखा जा सकता है, जिनके पुरोभाग पर चिह्न तथा ब्राह्मी लिपि में लेख है। इन ढली मुद्राओं का पृष्ठतल सादा है। दूसरे वर्ग के अन्तर्गत विदेशी शासकों के पूर्ववर्ती शासकों के सिक्के जिनका समय दूसरी शताब्दी ई.पू. से प्रथम शताब्दी ई.पू. के मध्य का है। ढले हुए अथवा साँचों द्वारा निर्मित इन सिक्कों के निर्माण में पीतल या ताँबे का प्रयोग हुआ है। तीसरे वर्ग के अन्तर्गत विदेशी शासकों के परवर्ती राजाओं के सिक्के आते हैं जिनका समय दूसरी शताब्दी ई. से तीसरी शताब्दी ई. के मध्य है। मथुरा से प्राप्त सिक्कों पर सामान्तया उनके पुरोभाग पर खड़ी हुई मानवाकृति है जो सम्भवतः भगवान कृष्ण की है, यद्यपि एलन ने इसे लक्ष्मी की मूर्ति माना है। इन पर ब्राह्मी लिपि में शासकों का नाम लिखा है। जबकि इन सिक्कों का पृष्ठतल भिन्नता लिए हुए है, जिसमें घेरे में वृक्ष, बिन्दु समूह, हाथीसवार युक्त तीन हाथी या दौड़ता हुआ घोड़ा चित्रांकित है। घेरे में

वृक्ष तथा बिन्दु पूजा का प्रतीक है वही बिन्दु समूह का तात्पर्य परमब्रह्म या शिव का प्रतीक है। हाथी इन्द्र देवता का वाहन माना गया है।[66] कुछ सिक्कों पर राजाओं के नाम के साथ ही राजा, रात्रो, भागवत व महाराज भी अंकित है। मथुरा से भवनाग, स्कन्दनाग, भीमनाग ब्रहस्पतिनाग, देवनाग नामांकित मुद्रायें भी प्राप्त हुई हैं। उल्लेखनीय है कि उपरोक्त राजाओं का नाम प्रयागप्रशस्ति में भी उल्लिखित हैं, जिन्हे समुद्रगुप्त ने पराजित किया था।

एलन ने अपने कैटलॉग में मथुरा के छः मित्र शासकों के सिक्कों को प्रकाशित किया है[67] गोमित्र प्रथम, गोमित्र द्वितीय, ब्रह्ममित्र, सूर्यमित्र, विष्णुमित्र। इन शासकों में गोमित्र द्वितीय तथा ब्रह्ममित्र के सिक्के अधिक संख्या में मिले हैं।[68] एक सिक्के के पुरोभाग पर दाहिने हाथ में कमल लिये लक्ष्मी खड़ी चित्रांकित है[69] जिनके दाहिनी ओर कदम्ब का वृक्ष है। इसके बायीं ओर उज्जयिनी चिह्न है। किनारे ब्राह्मी लिपि में "सतमितस" लिखा है। पृष्ठतल सादा है। एलन का विचार है कि सम्भवतः मथुरा मित्र शासकों का राजचिह्न 'उज्जयिनी चिह्न' था। प्रथम शताब्दी ई. पू. के उत्तरार्द्ध में मथुरा शक क्षत्रपों के शासन के अन्तर्गत आ गया। रज्जुबुल, सोडास, हगामश, शिवघोष जैसे शक क्षत्रपों के सिक्के भी प्राप्त होते हैं।

मालवा से प्राप्त सिक्के :–

उज्जैन, महिष्मती, विदिशा, पदमावती, महेश्वर, एरण आदि पुरास्थलों से मालवा के जनपदीय सिक्के प्राप्त हुए हैं। आकार में छोटा होना मालवा के सिक्कों की विशेषता रही है।[70] झलरापाटन[71], सहारनपुर[72], बेसनगर[73], उज्जैन[74], एरण[75], महेश्वर[76], आदि स्थलों से आहत सिक्कों के साथ लेखरहित ढली मुद्रायें भी प्राप्त हुई

हैं। उपरोक्त स्थानों से मिले सिक्के गोलाकार, चौकोर तथा तिकोने हैं जो ताँबे से निर्मित हैं।[77] यहाँ से प्राप्त ढलित सिक्कों को भारमान पंचमार्क सिक्कों के समान है। महेश्वर से एक ढलित सिक्का 74 ग्रेन का प्राप्त हुआ है।[78] पवाया से भी 91 ग्रेन का सिक्का प्राप्त हुआ है।[79] इन सिक्कों पर हाथी, घेरे में वृक्ष, पर्वत पर अर्द्धचन्द्र, खोखला क्रास, उज्जयिनी चिह्न आदि का अंकन मिलता है। इस पर हाथी व अन्य प्रतीक चिह्न पुरोभाग पर जबकि पर्वत चिह्न पृष्ठतल पर अंकित है।[80] उज्जयिनी से प्राप्त सिक्कों को एलन[81] ने प्रतीक चिह्नों के आधार पर छः भागों में बाँटा है– घेरे में वृक्ष का चित्रांकन वाले सिक्के, त्रिमुखी कार्तिकेय अथवा शिव चित्रांकित सिक्के, ऐसे सिक्के जिन पर उज्जयिनी चिह्न नहीं है, घेरे में वृक्ष के चित्रांकन के साथ वृभषाकंन वाले सिक्के, लक्ष्मी अभिषेक वाले सिक्के तथा शेर तथा हाथी चित्रांकित सिक्के। घेरे में वृक्ष का चित्रांकन सड़क के किनारे विश्राम स्थल की ओर भी संकेत करता है। त्रिमुखी देवता का समीकरण उज्जैन की प्रसिद्ध महाकाल गुफा में खोजा जा सकता है। मछलियों के जोड़ो से तात्पर्य मिथुन से रहा होगा। क्रास ऑफ बाल्स उज्जयिनी चिह्न के रूप में माना जाता है। जो ऐसे चौराहे को दिग्दर्शित करता है जहाँ चारों ओर के रास्ते मिलते हों। उज्जयिनी का व्यापारिक स्थलों की संगम स्थली होना इसी संदर्भ में देखा जा सकता है। उज्जयिनी प्रतीक चिह्न को अनेक राजवंशों के शासकों ने अपनाया जैसे– सातवाहन, शक आदि।[82] एलन का कहना है कि मथुरा के मित्र शासकों का राजचिह्न उज्जयिनी चिह्न था।[83]

एरण से वल्मक, हमुगाम[84] दासस, प्रभुद, महु[85] सौम, सामन्त देव, इन्द्रगुप्त का (सीसे का सिक्का)[86] नमोल्लेख करने वाले सिक्के प्राप्त हुए हैं। उज्जयिनी चिह्न, घेरे

में वृक्ष, वृषभ, घोड़ा, नदी में मछली, , त्रिमुखी मानवाकृति, कमल आदि चिह्न एरण से प्राप्त इन सिक्कों पर सामान्तया मिलते हैं। एस.एल. कत्रे का विचार है कि कमल चिह्न का चित्रांकन एरण से प्राप्त सिक्कों की सामान्य विशेषता है।[87] कमल सामान्तया सरस्वती व लक्ष्मी का प्रतीक माना जाता है। विदिसा से शिवगुप्त नामांकित सिक्का मिला है[88] जिसे के.डी. वाजपेयी ने प्रकाशित किया है।[89] 44 ग्रेन के इस सिक्के के पुरोभाग पर बाँये कोने में चक्र तथा दाहिनी ओर लहरदार लाइनें हैं, मध्य में ब्राह्मी लिपि में शासक का नाम लिखा है। पृष्ठतल पर दोहरे गोले में उज्जयिनी चिह्न तथा एक पुरूषाकृति बनी प्रतीत होती है।[90] इसके बाद नाग शासकों के सिक्के मिलते हैं जिन पर शिववाहन वृषभ तथा कार्तिकेय वाहन मोर का अंकन प्राप्त होता है।

तक्षशिला से प्राप्त सिक्के :–

पाकिस्तान में स्थित रावलपिण्डी से लगभग 20 किमी. पश्चिमोत्तर में तक्षशिला नगर है। यहाँ पर ईरानी, यूनानी, मौर्यवंश, ग्रीक, शक, तथा कुषाण वंश के शासकों ने शासन किया। सामान्तया इन सभी राजवंशो के सिक्के यहाँ से प्राप्त होते हैं।[91] भारत में सर्वप्रथम मुद्रा निर्माण की ठप्पा प्रणाली का प्रारम्भ तक्षशिला से ही हुआ।[92] स्मिथ इस विधि का प्रारम्भ 450 ई.पू. तक ले जाते हैं। तक्षशिला से प्राप्त सिक्कों को तीन भागों में बाँटा जा सकता है– प्रथम वर्ग के अन्तर्गत चौकोर तथा भारी सिक्के रखे जा सकते हैं जिनके अग्रभाग पर नन्दिपद, चैत्यविहार, तक्षशिला चिह्न का अंकन है जबकि पृष्ठभाग सादा है। दूसरे वर्ग के अन्तर्गत मोटे तथा गोल सिक्के आते हैं

जो दोनों ओर चित्रांकित हैं। अग्रभाग पर सुमेरू पर्वत, नन्दिपद, शेर, हाथी तथा घोड़े का चित्रांकन हैं, पृष्ठभाग पर हाथी, पर्वत, वृषभांकन मिलता है। तीसरे वर्ग में पतले तथा गोल सिक्कों को रखा जा सकता है। इन सिक्कों पर निगम अथवा नैगम शब्द प्राप्त होता है ऐसी मुद्रायें प्रारम्भ में तक्षशिला में प्राप्त हुईं, उसके बाद कौशाम्बी से भी प्राप्त की गयीं।[93] ऐसी मुद्राओं को नैगम मुद्रा कहा जाता है, जिन्हें निगम या श्रेणी संस्थाओं ने तैयार किया था। इन नैगम मुद्राओं के अग्रभाग पर "तालीमत" "दोजक" 'अटका' आदि लेखांकित है जबकि पृष्ठभाग पर "नेगमा" अंकित है। रजत शलाका से काट कर तैयार किये गये लगभग चतुर्थ शताब्दी ई.पू. के सिक्के भीर के टीले के उत्खनन से प्राप्त हुए हैं। एलन का मत है कि इन्हीं सिक्कों को आम्भि ने सिकन्दर को भेंट स्वरूप प्रदान किया था। उल्लेखनीय है कि तक्षशिला से प्राप्त उक्त तीनों वर्गों की मुद्राओं के प्रतीक चिह्न भी प्राचीन भारतीय धर्मदर्शन से प्रभावित थे। सिक्कों पर अंकित पर्वत चिह्न हिन्दू देवी–देवताओं का स्थायी निवास माना जाता रहा है।[94] इसी प्रकार नन्दी भी शिव तथा उनके वाहन वृषभ से सम्बन्धित है।[95] इन सिक्कों के अन्य प्रतीक चिह्न जैसे शेर, मकर, हाथी आदि भी क्रमशः माता दुर्गा, गंगा, तथा इन्द्र के वाहन माने गये हैं।[96]

गण राज्यों से प्राप्त सिक्के :–

लगभग दूसरी शताब्दी ई.पू. जब शक्तिशाली केन्द्रीकृत मौर्य साम्राज्य का पतन हुआ, तब से लेकर गुप्त साम्राज्य के उदय तक विभिन्न गणराज्यों तथा जनपद राज्यों का अस्तित्व था।[97] यौधेय, आर्जुनायन, कुणिन्द, औदुम्बर, मालव जैसे गणराज्यों

ने अपनी–अपनी मुद्रायें भी जारी कीं। कुछ गणराज्यों ने केवल ताँबे के सिक्के जारी किये, यद्यपि कुछ ने ताँबे तथा चाँदी दोनों धातु के सिक्के बनवाये। गणराज्यों से प्राप्त सिक्कों की कुछ सामान्य विशेषता रही है जैसे–गण का नाम, शासक का नाम, दोनों का संयुक्त नाम, उस गण के आराध्य देवता का नाम, तथा किसी आदर्श वाक्य का लेखाकंन आदि। इन सिक्कों के प्रतीक चिह्नों की संख्या लगभग पच्चास है, जिसमें घेरे में वृक्ष सर्वाधिक प्रचलित था। रैप्सन, स्मिथ तथा कनिंघम का मानना है कि यौधेय गण राज्य की मुद्रायें सहारनपुर से मुल्तान तक के क्षेत्रों से प्राप्त हुई हैं, जिन पर "यौधेय गणस्य जयः" "बहुधान्यक यौधेयानाम" लेख अंकित है। यौधेयों के सिक्कों पर नन्दी, हाथी, हिरन, मोर, घेरे में वृक्ष, लक्ष्मी, चक्र, यूप, स्तूप, त्रिशूल, , शिव, कलश आदि का अंकन प्राप्त होता है। इसके अतिरिक्त "ब्राह्मणस्य देवस्य भगवता" "भगवतः यौधेयनः" तथा "कुमारस" लेख भी प्राप्त होता है। यौधेयों ने सिक्कों पर अपनी धार्मिक, राजनैतिक, आर्थिक आदि प्रवृत्तियों को स्पष्ट करने की चेष्टा की है। यौधेयों के सिक्कों पर अंकित वृषभ उनकी बहादुरी एवं शक्ति का प्रतीक माना जा सकता है।[98] युद्ध देवता शिवपुत्र कार्तिकेय यौधयों के आराध्य देव थे, अपने सिक्कों पर उन्होंन कार्तिकेय तथा उनके वाहन मोर को महत्वपूर्ण स्थान दिया है। अति प्राचीनकाल से आज तक हिन्दुओं का पवित्र प्रतीक चिह्न रहा है, विवाह, स्वागत व अन्य शुभ कार्यो में इसका प्रयोग होता आया है। द्वितीय विश्वयुद्ध की विजय पर इस प्रतीक चिह्न का प्रयोग जर्मन नाजी ने किया था। वीर यौधयों ने भी चिह्न को अपने सिक्कों पर स्थान देकर स्वयं को गौरवान्वित महसूस किया होगा। घेरे में वृक्ष प्रतीक चिह्न को यौधयों ने अपने सिक्कों पर महत्वपूर्ण स्थान दिया है।

उल्लेखनीय है कि वृक्ष पूजा भारत में अति प्राचीन है। मोहन जोदड़ो से उत्खनन में वृक्ष पूजा के साक्ष्य प्राप्त हुए हैं।[99] यौधेयों ने हिरन को अपने सिक्कों पर अंकित करवाया है, जिसे गति और सुन्दरता का प्रतीक माना गया है। सिक्कों पर गज व चक्र का अंकन उनके अतिप्रताप का द्योतक माना जा सकता है। शिव, कार्तिकेय, नन्दी, नन्दिपद, त्रिशूल आदि का अंकन उनके शैव धर्म के अनुयायी होने का संकेत देता है।[100] सिक्कों पर लक्ष्मी का चित्राकंन उनकी आर्थिक समृद्धि का प्रतीक माना जा सकता है, जो उनके सिक्कों पर लेखांकित "बहुधान्यक यौधयानाम" से अनुप्रमाणित है। इनके सिक्कों पर कलश का चित्रांकन भी मिलता है जो हिन्दुओं में पूजा, स्वागत व अन्य शुभ अवसरों पर प्रयुक्त होता था। वनवास के उपरान्त जब राम अयोध्या वापस आये, तो अयोध्या वासियों ने सुन्दर मंगल कलशों से उनका स्वागत किया था। "श्री राम चरित मानस" में कवि तुलसीदास ने इन शब्दों में वर्णन किया है।[101]

कंचन कलश विचित्र संवारे।
सबहिं धरे सजि निज निज द्वारे।।

इस प्रकार यौधेयों ने अपने सिक्कों के माध्यम से धार्मिक, राजनैतिक आर्थिक आदि प्रवृत्तियों को सफलता पूर्वक दर्शाया है। उन्होंने विभिन्न देशी तत्वों को स्थान दिया जो विशुद्ध भारतीय संस्कृति के अंग थे।

अम्बाला, कांगड़ा, सहारनपुर से कुणिन्द गणराज्य की मुद्रायें प्राप्त हुई हैं। इन सिक्कों पर ब्राह्मी तथा खरोष्ठी लिपि में लेख प्राप्त हुए हैं। अमोघभूति नामक शासक की ताँबे तथा चाँदी की मुद्रायें प्राप्त हुई हैं। रजत मुद्राओं के अग्रभाग पर कमल पर

बैठी लक्ष्मी, हिरन, साँप, स्तूप तथा चक्र का अंकन प्राप्त होता है तथा ब्राह्मी लिपि में "अमोघमृतस महरजस राज्ञ कुणदस" लेखांकित है। पृष्ठभाग पर सुमेरू पर्वत, नन्दिपद, स्वस्तिक, घेरे में वृक्ष, तथा खरोष्ठी लिपि में "राज्ञो कुणिदस अमोभूतिस महरजस" लेखांकित है। कुणिन्द गणराज्य का एक अन्य सिक्का प्राप्त हुआ है, इस ताम्र सिक्के पर छत्रेश्वर लेखांकित है और शिव का चित्रांकन भी है। इसके पृष्ठभाग पर अन्य प्रतीक चिह्न प्राप्त होते हैं। औदुम्बर गण के सिक्कों की पहचान नामांकन, लिपिगत विशेषताओं तथा प्रतीक चिह्न के आधार पर की गयी है। यहाँ के सिक्के ताम्र तथा रजत निर्मित हैं कुछ ताम्र सिक्के वर्गाकार आकृति में है तथा भारतीय मुद्रा परम्परा के पोषक हैं। इस गणराज्य के सिक्कों को द्वितीय शबाब्दी ई.पू. के आस पास रखा जा सकता है। इन सिक्कों के अग्रभाग पर उपाधियुक्त शासक का नाम खरोष्ठी में तथा पृष्ठभाग पर उपाधियुक्त शासक का नाम ब्राह्मी लिपि में अंकित है। प्रतीक चिह्नों में वृत्त, वृक्ष, नन्दी, कमल, विश्वामित्र, गज प्रमुख हैं। इसमें कमल, लक्ष्मी व सरस्वती का प्रतीक, वृषभ, शक्ति का प्रतीक तथा शिव वाहन, गज अतिप्रताप का प्रतीक तथा इन्द्र देवता का वाहन माना जा सकता है।[102] औदुम्बर गण की दो मुद्रायें मिली जिन्हें एलन तथा व्हाइटहेड ने क्रमशः कैटलॉग आफ द क्वाइन्स ऑफ द एन्शियन्ट इन्डिया, कैटलॉग आफ द क्वाइन्स इन द पंजाब म्यूजियम में प्रकाशित किया है। उपरोक्त दोनो ही सिक्के दाढ़ी युक्त अंकन लिये हुए हैं तथा 'विश्वामित्र' लेखांकित हैं। उल्लेखनीय है कि पुराणों में औदुम्बर को विश्वामित्र का वंशज बताया गया है, यह तथ्य मौद्रिक साक्ष्य से भी अनुप्रमाणित हो जाता है।

मालवगण के सिक्के राजस्थान में जयपुर से अधिक मिले हैं। यहाँ से प्राप्त सिक्के ताम्र निर्मित हैं तथा आकार में बहुत छोटे हैं। स्मिथ ने मालवगण से प्राप्त अब तक का सबसे छोटा सिक्का प्रकाशित किया है जिसका व्यास 0.2 इंच है।[103] यहाँ से प्राप्त सिक्कों पर मालवगण तथा शासकों का नाम अंकित है। "मालवगण जयः" लेखाकंन के साथ ही साथ सूर्य, कलश, सिंह, मोर, नन्दिपद, नन्दी, घेरे में वृक्ष, लक्ष्मी आदि प्रतीक चिह्न का चित्रांकन भी मिलता है। इन प्रतीक चिह्नों का विवरण शेष गणराज्यों के सिक्कों के प्रतीक चिह्नों के विश्लेषण में किया जा चुका है। मालवगण के मुद्राशिल्पियों ने भी धार्मिक विश्वास, आर्थिक समृद्धि, शक्ति, विवेक आदि को प्रदर्शित करने वाले तत्वों को अपनी मुद्राओं पर स्थान दिया।

सातवाहन मुद्राएं :–

दक्षिण भारत में मौर्य साम्राज्य के अवशेषों पर सातवाहन साम्राज्य स्थापित हुआ। इस राजवंश ने मुख्यतः ताँबा,सीसा तथा पोटीना के सिक्के जारी किये हैं। पोटीन धातु ताँबा तथा काँसा मिला कर तैयार की जाती थी। सातवाहनों ने चाँदी के सिक्के बहुत कम मात्रा में प्रचलित किये जबकि सीसे के सिक्के बहुत अधिक मात्रा में प्राप्त हुए हैं। चाँदी के सिक्के सबसे हल्के और पोटीन के सिक्के सबसे भारी हैं। सीसे के सिक्के आन्ध्रप्रदेश, अनन्तपुर, कारोमण्डलतट, चितलदुर्ग तथा धारवाड़ से प्राप्त हुए हैं। पोटीन की मुद्रायें प्रमुख रूप से मध्य प्रदेश के चाँदा जिले से प्राप्त हुई हैं, जबकि चाँदी के सिक्के उत्तरी कोंकण तथा नासिक क्षेत्र से मिले हैं। सातवाहन मुद्राओं पर प्राकृत भाषा, ब्राह्मी लिपि तथा प्रान्तीय द्रविड़ भाषा का प्रयोग हुआ है।

इनकी मुद्राओं में कलात्मकता का अभाव है, यह मुद्रायें स्थानीय प्रभाव से अधिक प्रभावित थीं। उज्जयिनी चिह्न की अधिकता उत्तर भारतीय प्रभाव को प्रकट करती है। सातवाहन नामक शासक की मुद्राओं के अग्रभाग पर सूड़ उठाये हाथी, और "सिरि सदवह" लेख है, इस सीसे के सिक्के के पृष्ठभाग पर बड़े आकार का उज्जयिनी चिह्न जिसके दो घेरों के मध्य एक–एक वृत्त है, अंकित है।[104] यह सिक्का कोण्डापुरम से प्राप्त हुआ है। सतकनि नामक शासक की एक मुद्रा के अग्रभाग पर सूड़ उठाये बांयीं ओर बढ़ता हाथी दिखाया गया है, हाथी के ऊपर स्वस्तिक का चिह्न है, 'रण सिरि सात" लेखांकित है। पृष्ठभाग पर वेदिका में वृक्ष चित्रांकित है।[105] सतकनि की दूसरी मुद्रा के अग्रभाग में दाहिनी ओर उछलता हुआ शेर दिखाया गया है उसके ऊपर स्वस्तिक का चिह्न 'रणो सिरि सतकणिस' लेख के साथ अंकित है। पृष्ठभाग में विन्दु की रेखाओं से निर्मित वर्ग, नन्दिपद के साथ उज्जयिनी चिह्न है।[106] इसी शासक की एक अन्य मुद्रा के अग्रभाग पर मानव आकृति तथा उज्जयिनी चिह्न है और "रणो सिरि साततिस' लेखांकित है। पृष्ठभाग पर तीन मेहराब की पहाड़ियाँ, वेदिका में वृक्ष साथ में मछली का चित्रांकन मिलता है।[107] यह सिक्का त्रिपुरी से प्राप्त हुआ है। गोदावरी जिले से 1.55 इंच व्यास तथा 559.5 ग्रेन का सीसे का अत्यन्त बड़ा सिक्का मिला है इसका एक पट सादा है दूसरे पट पर सिंह, 'रणो.... .वरस' अपूर्ण लेख मिलता है।[108] गौतमीपुत्रशातकर्णि के अनेक सिक्के विभिन्न स्थानों से प्राप्त हुए हैं, जिसमें अधिकाशंतः सीसे के हैं। इसके एक सिक्के के अग्रभाग पर चैत्य के साथ लहरदार लाइनें हैं और "सतकणस रणो गौतमीपुतस" लेख अंकित है जबकि पृष्ठ भाग पर उज्जयिनी चिह्न अंकित है।[109] एक अन्य सिक्के के अग्रभाग पर

तीन मोटे मेहराबों के साथ चैत्य का अंकन है साथ ही 'रणो गौतमी' लेख अंकित है। इसका पृष्ठ भाग उज्जयिनी चिह्न लिए हुए है।[110] यह सिक्का अमरावती से प्राप्त हुआ है। कोण्डापुरम से प्राप्त सिक्के के अग्रभाग पर सूड़ ऊपर को उठाये हाथी का अंकन है और "रणो गौतमीपुतस सिरि शातकणिस" लेख अंकित है। पृष्ठभाग पर उज्जयिनी चिह्न बना हुआ है।[111] वशिष्ठीपुत्र पुलुमावी के सिक्के पर्याप्त मात्र में मिले हैं जिनके अग्रभाग पर हाथी, लहरदार रेखायें, तीन महराबों वाली पहाड़ी तथा पृष्ठभाग पर चैत्य तथा उज्जयिनी चिह्न अंकित है। इसका एक ताँबे का सिक्का जो प्रिन्स ऑफ वेल्स म्यूजियम में है, के अग्रभाग पर चैत्य के साथ "रणो वशिष्ठीपुतस सिरि....विस" लेखांकित है। पृष्ठभाग पर उज्जयिनी चिह्न प्राप्त होता है।[112] ब्रह्मपुरी से प्राप्त ताम्र सिक्के के अग्रभाग पर सूड़ ऊपर उठाये बांयी ओर देखता एक हाथी चित्रांकित है तथा "शिष्ठीपुतस सिरि पुलमावी" लेख मिलता है। पृष्ठभाग पर अर्द्धचन्द्र के साथ उज्जयिनी चिह्न प्राप्त होता है।[113] भिल्सा से प्राप्त सीसे के सिक्के के अग्रभाग पर मुकुट धारण किये शासक बांयी ओर देख रहा है और "सरशिथि–पुतस" लेख है पृष्ठभाग पर छः मेहराबों वाले चैत्य के साथ उज्जयिनी चिह्न अर्द्धचन्द्र तथा सूर्य चिह्न के मध्य में है।[114] एक सीसे का सिक्का मिला है जिसके अग्रभाग पर दो मस्तूलों वाले जहाज के अंकन के साथ 'सिरि पुवस' लेख मिलता है। पृष्ठभाग पर उज्जयिनी चिह्न चित्रांकित है।[115] शातकर्णि चतुर्थ, शिवश्री, शकशातकर्णि, श्रीयजनाशातकर्णि, विजयशातकर्णि, कुम्भशातकर्णि, कर्णशातकर्णि, कौशिकीपुत्रशातकर्णि आदि राजाओं के सिक्के प्राप्त हुए हैं। अधिकाशतः समस्त सिक्कों के पृष्ठभाग पर उज्जयिनी चिह्न मिलता है। जबकि अग्रभाग पर चैत्य, हाथी, शेर, जहाज, स्वस्तिक,

अर्द्धचन्द्र, मेहराब, मुकुटधारी राजा आदि का चित्रांकन मिलता है। उल्लेखनीय है कि विदिशा में सातवाहनों ने आहत मुद्राओं का प्रयोग किया जबकि अन्यत्र उनकी मुद्रायें लेखांकित हैं। प्राचीन त्रिपुरी के आस–पास के क्षेत्र से प्राप्त सिक्कों के अग्रभाग पर एक ओर अश्व तथा दूसरी ओर वृक्ष का अंकन मिलता है। गुजरात–मालवा सिक्कों पर सिंह के अंकन की प्रधानता है। महाराष्ट्र तथा विदर्भ प्रान्त में ताम्र व सीसा मिस्रित ताम्र सिक्कों पर सूड़वाले हाथी का अंकन तथा दूसरी ओर उज्जयिनी चिह्न अंकित है।

गुप्त कालीन मुद्रायें :–

कुषाण साम्राज्य के अवशेषों पर चौथी शताब्दी के लगभग गुप्त साम्राज्य का उदय हुआ। गुप्त राजवंश के आदि शासक श्रीगुप्त तथा घटोत्कच पूर्णतया शक्ति सम्पन्न शासक न हो सके, वे सामन्त शासक ही रहे। इन प्रारम्भिक गुप्त शासकों द्वारा कोई मुद्रा जारी न किया जाना इसका तार्किक कारण माना जा सकता है। गुप्त कालीन शासन–सत्ता के गौरव का प्रारम्भ चन्द्रगुप्त प्रथम से होता है। 320 ई. के लगभग चन्द्रगुप्त प्रथम ने "महाराजाधिराज" की उपाधि धारण की, गुप्त सम्वत का प्रारम्भ किया तथा अपने नाम के सिक्के जारी किये।[116] इसकी जो मुद्रायें प्राप्त होती हैं, उन्हें 'राजा–रानी' प्रकार का नाम दिया गया है, जो उत्तर प्रदेश में मथुरा, अयोध्या, लखनऊ, सीतापुर, टांडा, बनारस तथा भरतपुर में स्थित बयाना से प्राप्त हुई हैं। इन सिक्कों पर दाहिनी ओर "श्रीकुमारदेवी" तथा बांयीं ओर "चन्द्रगुप्त" लिखा है। अग्रभाग पर चित्रांकित खड़ा राजा, रानी को आभूषण के रूप में अँगूठी जैसी कोई वस्तु दे रहा है, कुछ सिक्कों में यह वस्तु सिन्दूरदानी जैसी प्रतीत होती हैं। पृष्ठभाग

पर हाथ में नालयुक्त कमल लिए लक्ष्मी का चित्रांकन "लिच्छवयः" लेख के साथ किया गया है।[117] एलन इस सिक्के पर सिंहवाहिनी लक्ष्मी के अंकन व रानी के वंश का उल्लेख तथा कुषाण शैली की झलक, जो कि समुद्रगुप्त प्रारम्भिक सिक्कों की समान्य विशेषता थी, के आधार पर मानते हैं कि इस मुद्रा को समुदगुप्त ने अपने माता–पिता के विवाह के स्मृति स्वरूप बनवाया था।[118] लेकिन ए.एस. अल्टेकर ऐसा नहीं मानते हैं, उनका कहना है कि इसमें कुषाण शैली का अभाव है। "लिच्छवयः" का अंकन भी राजनैतिक लाभ के लिए किया गया है। समुद्रगुप्त की सभी मुद्राओं पर उसके नाम का अंकन मिलता है।[119] लेकिन इस मुद्रा पर ऐसा नहीं है। अतः यह सिक्का समुद्रगुप्त का न होकर चन्द्रगुप्त प्रथम का ही है।[120]

समुद्रगुप्त की मुद्राओं के चित्रांकन एवं लेख उसके राजनैतिक जीवन को छूते हुए व्यक्तिगत जीवन का लेख–जोखा प्रस्तुत करने में समर्थ हैं। गरूड़ध्वजशैली, धनुर्धारीशैली, परशुशैली, वीणाशैली, व्याघ्रशैली, अश्वमेघशैली जैसी छः प्रकार की स्वर्ण मुद्राओं का प्रचलन समुद्रगुप्त द्वारा किया गया। गरूड़ध्वजशैली की मुद्रायें सर्वप्रथम समुद्रगुप्त ने ही चलवायीं।[121] इस मुद्रा के अग्रभाग पर बायें हाथ में गरूड़ध्वज और दाहिने हाथ से अग्नि में आहुति देते हुए राजा खड़ा हुआ दिखाया गया है। पृष्ठभाग पर सिंहासन पर विराजमान देवी का चित्र है, जो बायें हाथ में कार्नुकोपिया तथा दाहिने हाथ में पाश लिए हैं। इसके साथ ही "पराक्रमः श्रीविक्रम" तथा "समरसत वितत विजयो" जैसे लेखों का अंकन भिन्नता पूर्वक किया गया है।[122] प्रयागप्रशस्ति के विवरण यह इंगित करते हैं कि समुद्रगुप्त के आदेश गरूड़ चिह्न से युक्त रहते थे। इस प्रकार स्मिथ महोदय का मानना है कि गरूड़ध्वज मुद्राओं पर रोमन प्रभाव की

झलक है, असगंत प्रतीत होता है।[123] इसके अतिरिक्त बेसनगर के गरूड़स्तम्भ से भी यह प्रतिध्वनित होता है कि इससे पूर्व गरूड़ चिह्न द्वितीय शताब्दी ई.पू. में ही भारत में प्रचलित था। समुद्रगुप्त की धनुर्धारीशैली की मुद्रायें भरसार (जौनपुर) पगारा (धार) वान वरद (दुर्ग) बयाना से प्राप्त हुई हैं।[124] इस शैली की मुद्राओं में बाण लिये राजा को कुषाण वेश–भूषा में हवन करते दिखाया गया है। पृष्ठतल पर "अप्रतिरथ" लेखांकित है।[125] समुद्रगुप्त की परशुधारी मुद्रायें कन्नौज, वाराणसी, बयाना से प्राप्त हुई हैं, जिन के अग्रभाग पर राजा को परशु लिए चित्रांकित किया गया है। राजा और अंकित एक वामन के मध्य अर्द्धचन्द्र का अंकन किया गया है। इसके पृष्ठभाग पर "कृतान्त परशुः" लेखांकित है।[126] समुद्रगुप्त ने उत्तर भारत तथा पश्चिमी भारत की विजय के उपलक्ष्य में अश्वमेघ शैली की मुद्रायें जारी कीं, कोलकता, लखनऊ तथा ब्रिटिश सग्रंहालयों में सुरक्षित यह मुद्रायें प्राचीनतम भारतीय मुद्राकला के सर्वोत्तम उदाहरण हैं। इन सिक्कों के अग्रभाग पर यूप के समीप अश्व चित्रांकित किया गया है, जो सुन्दर तथा भव्य है, साथ ही अपनी आसन्न मृत्यु से अनजान है। रानी की आकृति भी कामनीय है, जो यज्ञ के सेवा कार्य के लिए सतर्क खड़ी हैं। घोड़े के पीठ पर जीन नहीं है। कुछ सिक्कों में उसके अयाल पर मोती दर्शाये गये हैं। उल्लेखनीय है कि शास्त्रों में यज्ञअश्व के अयाल तथा पूँछ में एक सौ मोती पिरोने की बात कही गयी है।[127] यूप का निचला भाग कुछ वेदी के बाहर तथा कुछ वेदी के अन्दर दिखलाया गया हैं, यूप की उक्त स्थिति यज्ञकर्ता को सांसारिक व पारलौकिक दोनों प्रकार के यश दिलाने वाली होती है।[128] अग्रभाग पर "राजधिराजः पृथ्वीमजिल्वा दिवं जयत्याहृतवाजिमेधः" तथा पृष्ठभाग पर "अश्वमेधपराक्रमः" लेख अंकित है।[129] समुद्रगुप्त

ने व्याघ्रनिहन्ता शैली की मुद्रायें भी जारी कीं, जिनके अग्रभाग पर राजा के पैरों के नीचे व्याघ्र चित्रांकित किया गया है, जिसे राजा धनुष वाण से आखेट कर रहा है। पृष्ठभाग पर देवी की आकृति है जिसे मकर पर सवार दिखाया गया है। इन मुद्राओं की विधि–व्यवस्था पूर्णतया भारतीय प्रतीत होती है, मकर पर सवार देवी को स्मिथ ने वरूणदेव की पत्नी रति होने की सम्भावना व्यक्त की है[130], लेकिन ए.एस. अल्टेकर मकर पर सवार देवी का तादात्म्य गंगा से स्थापित किया है, जिनका वाहन मकर माना गया है। उल्लेखनीय है कि गुप्त कालीन कला में भी गंगा–यमुना का अंकन एक सामान्य बात थी। समुद्रगुप्त द्वारा जारी किया गया वीणाधारी सिक्का ब्रिटिश संग्रहालय में सुरक्षित है।[131] इस सिक्के के अग्रभाग पर हाथ में वीणा लिए राजा का चित्रांकन है। पृष्ठभाग पर कार्नकोपिया लिए आसन पर विराजमान लक्ष्मी का अंकन है।[132] सिक्के को देखकर प्रतीत होता है राजा अवकाश के क्षणों में अपना मनोरंजन कर रहा है। सिक्के पर बनी वीणा भरहुत, साँची तथा बेसरनगर कला की भाँति श्रृंगाकार अथवा अर्द्धवर्तुलाकार है।[133] अल्टेकर का मत है कि समुद्रगुप्त ने अश्वमेध शैली के तथा वीणा शैली के सिक्कों को साथ–साथ जारी किया। विशेष उल्लेखनीय है कि वैदिक कालीन ग्रन्थ भी दर्शाते हैं कि अश्वमेध यज्ञ के अवसर पर वीणा वादन होता था। वैदिक कालीन साक्ष्य अल्टेकर के मत को बल प्रदान करते हैं। समुद्रगुप्त की कुछ मुद्रायें टांडा तथा बयाना निधि से प्राप्त हुई हैं जिनके अग्रभाग पर बांयी ओर खड़ा राजा के बायें हाथ में चक्रध्वज है तथा दायें हाथ से वेदिका पर आहुति देते हुए यज्ञकर्ता के रूप में अंकित है, साथ ही "काचोगाम वजित्य कर्मभिरूत्तमै–दिवं जयति" लेखांकित है।[134] पृष्ठभाग पर बायें हाथ में एक फूल लिए देवी का अंकन है, साथ ही

"सर्वराजोच्छेता" लेखांकित हैं इन सिक्कों की निर्माण तथा लेखन शैली पूरी तरह अन्य गुप्त शासकों के सदृश्य है। इस आधार पर 'काच' को गुप्त वंशावली में सम्मिलित कर उसकी मुद्राओं के आधार पर समद्रगुप्त के तत्काल बाद स्थापित करना तर्कसंगत लगता है।

चन्द्रगुप्त द्वितीय ने अपने पिता समुद्रगुप्त के मुद्रा निर्माण आदर्श को अपनाते हुए, नवीन शैली के सिक्कों का भी निर्माण करवाया। चन्द्रगुप्त द्वितीय की मुद्रा–नीति में धार्मिक विश्वास तथा वैयक्तिक प्रवृत्ति का भी परिचय मिलता है। उसका व्यक्गित धर्म वैष्णव था, जो भक्ति प्रधान था, जिसमें यज्ञीय अनुष्ठान महत्वपूर्ण नहीं था, सम्भवतः इसी कारण उसने अश्वमेध–यज्ञ का सम्पपदन नहीं किया। चन्द्रगुप्त द्वितीय द्वारा जारी की गयी मुद्राओं की कई विशेषतायें हैं जैसे संख्या विषयक प्रचुरता, पूर्व प्रचलित सिक्कों के आकार–प्रकार को नये आयाम देना, कुछ नवीन सिक्कों का प्रचलन आदि। उसने धनुर्धारी, सिंहनिहन्ता, अश्वारोही, छत्र, पर्यंक, पर्यंक स्थित राजा–रानी, ध्वजाधारी, चक्रविक्रम जैसे आठ शैलियों की स्वर्ण मुद्रायें जारी कीं। धनुर्धारी प्रकार के सिक्कों का भार 121,124,127 ग्रेन का मिलता है तथा व्यास 0.75 से 0.9 इंच तक है। इस शैली के सिक्कों को दो वर्गों में रखा जा सकता है, जिसके प्रथम वर्ग में राजा पायजामा धारण किये हुए है, देवी सिंहासनासीन है[135] तथा दूसरे वर्ग में राजा प्रायः धोती धारण किये हुए है व देवी कमलासीन हैं।[136] इस शैली के सिक्कों के अग्रभाग पर प्रभामण्डलयुक्त राजा को पायजाम टोपी और आभूषण धारण किये, बांयें हाथ में धनुष व दाहिने हाथ में वाण लिए खड़ा हुआ चित्रांकित किया गया है। राजा के सामने गरूड़ध्वज है और वृत्ताकार "देव श्री महाराजाधिराज श्रीचन्द्रगुप्तः"

लेखांकित है। इस लेख से प्रतीत होता है कि राजा में देवत्व आरोपित किया गया है। इन मुद्राओं के पृष्ठभाग पर बिन्दुओं के घेरे में वस्त्राभूषण धारण किये सिंहासनासीन लक्ष्मी बांयें हाथ में कार्नकोपिया या कमल तथा दाहिने हाथ में पाश लिये चित्रांकित हैं। इसके साथ ही कुछ सिक्कों पर "श्री विक्रम" तथा कुछ पर "चन्द्रगुप्त" लेख अंकित है। चन्द्रगुप्त द्वितीय द्वारा जारी की गयी सिंहनिहन्ता प्रकार की मुद्राओं का औसत भार 121 ग्रेन है लेकिन कुछ मुद्रायें 124 या 127 ग्रेन की भी हैं। इन सिक्कों का व्यास 0.75 इंच से लेकर 0.85 इंच तक है। इन सिक्कों के अग्रभाग पर सिंह पर आक्रमण करते हुए राजा का चित्रांकन है, जो छोटी धोती या जांघिया धारण किये है। कुछ सिक्कों पर टोपी मिलती है जबकि कुछ पर टोपी नहीं दिखाई गयी है। दाहिने अथवा बांयें खड़ा राजा एक हाथ में धनुष तथा दूसरे हाथ से प्रत्यंचा चढ़ाता हुआ सिंह को मार रहा है। कुछ मुद्राओं में राजा सिंह को कुचलता हुआ चित्रांकित है, जबकि कुछ सिक्कों में सिंह को भागता हुआ दिखाया गया है। वृत्ताकार लेख "नरेन्द्रचन्द्रः प्रथितरणों रणे जयत्यजेयो भुवि सिंहविक्रमः" लेखांकित है। इस प्रकार सिंह निहन्ता प्रकार के सिक्कों के तीन उप प्रकार हैं– सिंह संघर्ष प्रकार[137], सिंह पलायन प्रकार[138] तथा सिंह अक्रान्त प्रकार।[139] इन तीन उपप्रकारों का सर्वप्रथम उल्लेख स्मिथ ने किया, जिसे अल्टेकर ने भी स्वीकार कर लिया। इन सिक्कों के पृष्ठभाग पर सिंहवाहिनी देवी का चित्रांकन है, जिनके दाहिने हाथ में पाश तथा बांयें हाथ में कमल या कार्नकोपिया है। उस देवी का तदात्म्य दुर्गा से स्थापित किया जा सकता है। विशेष उल्लेखनीय है कि कभी–कभी इन सिक्कों पर देवी का प्रदर्शन बिना किसी अधिष्ठान के ही गतिशील मुद्रा में किया गया है। देवी के हाथ में

कभी—कभी कमल का अंकन भी है, जो यह संकेत देता है कि उनकी अवधारण दुर्गा रूप से लक्ष्मी रूप में स्थापित हो रही थी।

चन्द्रगुप्त द्वितीय ने जो अश्वारोही प्रकार की मुद्रायें जारी करवायीं, वह उसकी मौलिक मुद्रायें थीं क्योंकि इनका प्रचार तथा प्रयोग का प्रारम्भ सम्राट ने स्वयं किया था। इस शैली के अधिकांश सिक्के 121 ग्रेन के हैं, यद्यपि कुछ सिक्के 124 व 127 ग्रेन के भी प्राप्त हए हैं। अश्वारोही शैली के सिक्कों का व्यास 0.75'' से 0.8'' तक हैं। स्मिथ ने सिक्कों पर अश्व के चित्रांकन के आधार पर इन सिक्कों को दो वर्गों में विभाजित करते हुए, प्रथम वर्ग में बांयीं ओर देखते हुए और दूसरे वर्ग में दाहिनी ओर देखते हुए अश्वारोही सिक्कों को रखा है। इस वर्ग के सिक्कों के अग्रभाग पर प्रभामण्डलयुक्त राजा बांयीं या दाहिनी ओर मुख किये सुसज्जित घोड़े पर आरूढ़ है। अधोवस्त्र तथा आभूषण धारण किये राजा के हाथ में धनुष है। कुछ सिक्कों पर राजा के बांयीं ओर लटकती तलवार का अंकन मिलता है। "परमभागवत महाराजाधिरज श्रीचन्द्रगुप्तः" वृत्ताकार लेख अंकित है। इन सिक्कों के पृष्ठभाग पर देवी की आकृति को प्रायः आसन्दिका पर प्रतिष्ठित दिखाया गया है। इनके दाहिने हाथ में पाश व बांयें हाथ में कमल का अंकन है[140] अश्वारोही शैली के सिक्कों की भाँति छत्र शैली के सिक्के भी स्वयं चन्द्रगुप्त द्वितीय द्वारा चलाये गये। ऐसे अधिकांश सिक्कों का भार 121 ग्रेन व 124 ग्रेन मिलता है जिनका व्यास 0.75 से 0.85 इंच के मध्य है। इन सिक्कों के अग्रभाग पर राजा का अंकन यज्ञकर्ता के रूप में किया गया है। राजा के बांयें हाथ में तलवार है, इसके पीछे एक वामन छत्र लिए चित्रांकित है। पृष्ठभाग पर लक्ष्मी का अंकन है, जिनके दाहिने हाथ में पाश और बांयें हाथ में कमल है। अल्टेकर

ने एलन की भाँति अग्रभाग पर पाये जाने वाले गद्य तथा पद्य लेखों के आधार पर इन सिक्कों को दो वर्गों में बांटा है। द्वितीय वर्ग के अन्तर्गत वे सिक्के आते हैं, जिन पर "क्षितिम वजित्य सुचरितेदिवं जयति"[141] श्लोक बद्ध लेख मिलता है। प्रथम वर्ग में वे सिक्के सम्मिलित किये गये हैं, जिन पर "महाराजाधिराज श्रीचन्द्रगुप्त"[142] का उल्लेख है। द्वितीय वर्ग के सिक्के प्रचुर मात्रा में प्राप्त हुए हैं। छत्र प्रकार के सिक्के अपना अलग महत्व रखते हैं, क्योंकि इनमें एक ऐसा उदाहरण मिलता जिस पर यज्ञीय वेदी को शिवलिंग का रूप दिया गया है, जो अर्चिका/आधार पर प्रतिष्ठित है। इसे तत्कालीन मुद्राशिल्पियों के एक नवीन प्रयोग का अच्छा उदाहरण माना जा सकता है। यद्यपि टामस इसे चन्द्रगुप्त प्रथम की मुद्रा मानते हैं[143] जो कि अतार्किक है। चन्द्रगुप्त द्वितीय द्वारा जारी पर्यंक शैली की मुद्राओं के अग्रभाग पर दाहिने हाथ में कमल तथा बांयां हाथ पर्यंक पर रखे हुए राजा छोटी धोती और आभूषण धारण किये हुए पर्यंक पर बैठा है। इन सिक्कों का व्यास 0.8 इंच से 0.85 इंच तक है और भार 121 ग्रेन है यद्यपि ब्रिटिश संग्रहालय में 114.4 ग्रेन का भी एक सिक्का है। वर्तुलाकार लेख "देव श्रीमहाराजधिराज श्रीचन्द्रगुप्तस्य विक्रमादित्यस्य या देव श्रीमहाराजाधिराज श्रीचन्द्रगुप्तः" लेखांकित है।[144] कहीं–कहीं पर्यंक के नीचे एक लेख "रूपकृती" शब्द उत्कीर्ण मिलता है, ऐसा लगता है कि यह शब्द या तो "रूपाकृतिः" है या "रूपकृति" जिसका अर्थ क्रमशः "रूप" अर्थात सिक्के पर आलेखित आकृति, व चन्द्रगुप्त के लिए प्रयुक्त विशेषण के रूप में माना जा सकता है। पर्यंक शैली के सिक्कों के पृष्ठभाग पर "सिंहासनासीन देवी बांयें हाथ में कमल लिए कमलासन पर पैर रखे चित्रांकित हैं। कुछ सिक्कों में देवी के दाहिने हाथ में पाश है, "श्रीविक्रमः" लेखांकित है। जबकि

पर्यंक पर स्थित राजा–रानी शैली के सिक्के पर राजा की आकृति का अंकन ध्वजा के साथ है, जिसके सामने यज्ञीय वेदी बनी है। इसके पीछे गरूड़ध्वज है। मुद्रालेख स्पष्ट नहीं है। हार्नले ने इसे "प्रवीरः" पढ़ा है और इसे चन्द्रगुप्त प्रथम से सम्बन्धित बताते हैं। जबकि अल्टेकर इसे "श्रीचन्द्रगुप्तः" बताते हैं अल्टेकर का मत अधिक तर्कसंगत है, उनका कहना है कि पृष्ठभाग पर "श्रीविक्रमः" लेख मिलता है, जो चन्द्रगुप्त द्वितीय का ही द्योतक माना जा सकता है। दूसरे यह कथन कि चन्द्रगुप्त द्वितीय का कम भार वाला सिक्का मिला ही नहीं सत्य नहीं है क्योंकि बयाना निधि से चन्द्रगुप्त द्वितीय के लगभग एक दर्जन सिक्के ऐसे हैं, जिनका भार भी लगभग 112 ग्रेन के आस–पास है। उल्लेखनीय है कि उक्त सिक्के का भार भी 112.5 ग्रेन है। अल्टेकर कहते है कि अधिक सम्भव है कि प्रस्तुत शैली पर्यंक शैली के साथ–साथ या इसके तुरन्त बाद चलाया गया हो। इसके पृष्ठभाग पर राजा एवं राजमहिषी परस्पर सम्मुख पर्यंक पर आसीन हैं। राजमहिषी को राजा कोई गोल बस्तु दे रहा है। राजा–रानी के मध्य अर्द्धचन्द्र अंकित है। रानी के पीछे किनारे से "श्री वि" तथा राजा के पीछे 'क्रम' लिखा मिलता है। इसी शासक के ध्वजाधारी शैली का केवल एक सिक्का मिला है जो काशी विश्वविद्यालय के कलाभवन में सुरक्षित है। इस सिक्के का व्यास 0.8 इंच तथा वजन 118 ग्रेन है। इसके अग्रभाग पर राजा की आकृति है, जो बांयें हाथ में फीतेदार ध्वजा लिए और दाहिने हाथ में वेदी में आहुति देते बांयीं ओर खड़ा है। वेदी के पीछे गरूड़ध्वज है। राजा के बांये हाथ के नीचे "चन्द्रगुप्त" शब्द अंकित है। पृष्ठभाग पर दाहिने हाथ में पाश व बांयें हाथ में कार्नकोपयिा लिए प्रभामण्डलयुक्त देवी सिंहासनासीन है। "परम भागवत" लेखांकित है।

चक्रविक्रम शैली का केवल एक सिक्का बयाना निधि से प्राप्त हुआ है, जिसका व्यास 0.75 इंच तथा वजन 116.7 ग्रेन है। इसके अग्रभाग पर "चक्रपुरूष" नामक देवता का चित्रांकन है। इसके समक्ष राजा की आकृति है जो देवता के हाथ से प्रसाद ग्रहण कर रहा है। राजा के हाथ में खड्ग है, इस भाग पर कोई मुद्रा लेख नहीं है। पृष्ठतल पर लक्ष्मी चित्रांकित है जिनके हाथ में कमल है, "चक्रविक्रम" शब्द अंकित हैं। यह सिक्का नितान्त विशिष्टता लिये हुए है, क्योंकि इस पर शासक के नाम का उल्लेख नहीं किया गया है। लेकिन इस सिक्के का सम्बन्ध चन्द्रगुप्त द्वितीय से स्थापित किया जा सकता है क्योंकि इस पर चन्द्रगुप्त द्वितीय की विशिष्ट उपाधियाँ 'अजितविक्रम' व 'सिंहविक्रम' के समानार्थक उपाधि 'चक्रविक्रम' का अंकन उपलब्ध है। इसके अतिरिक्त चन्द्रगुप्त द्वितीय का वैष्णव होना विवाद रहित है। 'चक्रपुरूष' से विष्णु का द्योतन होता है। वैष्णव ग्रन्थ अहिर्बुध्न्य संहिता में चक्र अथवा सुदर्शन चक्र का तादात्म्य विष्णु से स्थापित किया गया है।[145]

समुद्रगुप्त के समय में चाँदी के सिक्के प्रयोग में नहीं आ सके थे लेकिन चन्द्रगुप्त द्वितीय के लिए चाँदी के सिक्के जारी करवाना आवश्यक हो गया। इसका विश्लेषण अगले अध्याय "प्राचीन भारतीय मुद्रा प्रणाली में देशी एवं विदेशी तत्वों का सामजस्य" के अन्तर्गत किया जायेगा। गुप्त राजवंश में चन्द्रगुप्त द्वितीय ही एक ऐसा शासक हुआ जिसने एक निश्चित योजना के साथ ताँबे के सिक्को का निर्माण करवाया। यद्यपि रामगुप्त व कुमारगुप्त ने भी ताँबे के सिक्कों को जारी किया।[146] चन्द्रगुप्त द्वितीय द्वारा जारी करवाये गये ताम्र सिक्के छत्र शैली, धनुर्धारी शैली,

उर्ध्वाकृति प्रकार, तथा चक्र प्रकार के हैं। चक्रशैली के सिक्कों में मौलिकता का पूर्ण निर्वाह मिलता है, जो उसकी वैष्णव प्रवृत्ति का परिचय देते हैं।

गुप्त कालीन मुद्रा निर्माण में कुमारगुप्त का स्थान अति महत्वपूर्ण है। क्योंकि कुमारगुप्त के समय में मुद्रा निर्माण की गुप्त–परम्परा परिवर्द्धन व नवीन उपलब्धियों का समिश्रण लिए हुए है। कुमारगुप्त के समय में मुद्रा कला उन्नति के शिखर पर पहुँच कर अवनति की ओर अग्रसर होने लगी।[147] कुमारगुप्त के समक्ष समद्रगुप्त व चन्द्रगुप्त द्वितीय की मुद्राओं का आदर्श विद्यमान था। कुमारगुप्त के सिक्कों पर राजा रानी शैली के सिक्कों का प्रभाव दृष्टिगोचर होता है, जिनका प्रचलन समुद्रगुप्त के समय नहीं था। इसी क्रम में कुमारगुप्त ने समुद्रगुप्त के व्याघ्रनिहन्ता शैली, अश्वमेध शैली और वीणा शैली के सम्मिलित सिक्कों को भी प्रोत्साहित किया, जिसे चन्द्रगुप्त द्वितीय के समय में प्रोत्साहन नहीं मिला था। धनुर्धारी अश्वारोही तथा छत्रशैली आदि चन्द्रगुप्त द्वितीय के सिक्कों का प्रभाव इन पर दृष्टिगोचर होता है। विशेष उल्लेखनीय है कि कुमारगुप्त ने नये तरीके के सिक्कों जैसे कार्तिकेय शैली, खड्ग शैली, गजारोही शैली, गजारूढ़ सिंहनिहन्ता शैली तथा अप्रतिघ शैली को भी जारी किया, जो इसके पहले उदित नहीं हुए थे। बयाना निधि से कुमारगुप्त के 638 सिक्के प्राप्त हुए हैं, जिसमें 13 कार्तिकेय प्रकार कार्तिकेय है। स्मिथ के अनुसार इलाहाबाद से मिली निधि के सभी 300 सिक्के कुमारगुप्त के कार्तिकेय शैली के सिक्के हैं। उल्लेखनीय है कि कुमारगुप्त का नामकरण देवताओं के सेनापति, शिवपुत्र कुमार कार्तिकेय के नाम पर हुआ था। अतः उनके प्रति आदर एवं श्रद्धा प्रकट करने के लिए कुमारगुप्त ने इस प्रकार की मुद्रा प्रचलित करवायी। जिसके अग्रभाग पर शासक द्वारा

कार्तिकेय वाहन मयूर को भोजन खिलाते चित्रांकित किया गया है। जबकि पृष्टभाग पर प्रभामण्डलयुक्त कार्तिकेय मयूर पर सवार बांयें हाथ में भाला लिये हैं और दाहिने हाथ से कुछ बिखेर रहे हैं, का अंकन है। इसी भाग पर मुद्रा लेख "महेन्द्र कुमारः" मिलता है। इन मुद्राओं का व्यास 0.8 इंच तथा वजन 127 ग्रेन है। इन सिक्कों का निर्माण का मूल उद्देश्य ही मुद्रा के माध्यम से युद्ध देवता शिवपुत्र कार्तिकेय की अर्चना थी। सर्वप्रथम अल्टेकर ने 1946 में बयाना निधि से कुमारगुप्त के खड्ग निहन्ता शैली के चार सिक्के प्रकाशित किये।[148] इन सिक्कों का व्यास 0.75 इंच से लेकर 0.8 इंच तक तथा वजन 127 ग्रेन है।[149] इन सिक्कों के अग्रभाग पर बटनदार कोट तथा पायजामा धारण किये राजा घोड़े पर आरूढ़ होकर दाहिने हाथ में तलवार लेकर गैंडे को मार रहा है इसी भाग पर "भर्ता ? खड्गत्राता कुमारगुप्तो जयत्यनिशम" लेखांकित है। पृष्टभाग पर गंगा मकर पर खड़ी हैं। जिनके पीछे एक दासी छत्र लिए खड़ी है तथा "श्रीमहेन्द्रखड्ग" लेख अंकित है। बंगाल में महनद नामक स्थान से कुमारगुप्त तथा स्कन्दगुप्त के धनुर्धारी शैली के सिक्कों के साथ सर्वप्रथम गजारोही शैली का एक सिक्का मिला जिसे एलन[150] ने कुमारगुप्त का गजारोही सिक्का माना है। कुमारगुप्त के गजारोही सिक्कों का वजन 125.4 ग्रेन से 129 ग्रेन के मध्य है। इन सिक्कों के अग्रभाग पर खुले सिर पर पट्टी बाँधे आभूषण धारण किये राजा का चित्रांकन है, जिसके दाहिने हाथ में अंकुश तथा बांयां हाथ कमर पर रखे तेजी से बांयीं ओर जाते हुए हाथी पर सवार है। इसके पीछे अनुचर छत्र लिये खड़ा है। "कुमारगुप्तः" लेखांकित हैं। पृष्टभाग पर दाहिने हाथ में कमल तथा बाये हाथ में कार्नकोपिया लिए कमल पर लक्ष्मी खड़ी है, दाहिनी ओर शंख है तथा "श्रीमहेन्द्रगजः"

लिखा है।[151] डॉ० हीरानन्द शास्त्री ने सर्वप्रथम 1917 में कुमारगुप्त के गजारूढ़ सिंहनिहन्ता शैली के सिक्कों को प्रकाशित किया।[152] इनका बजन सामान्तया 127 ग्रेन है। इस सिक्के के अग्रभाग पर दाहिनी ओर तेजी से बढ़ते हुए, सुसज्जित हाथी पर सवार राजा हाथ ऊपर उठाये कटार लिए आक्रमण की मुद्रा में चित्रांकित है। राजा का अनुचर छत्र लिए पीछे खड़ा है, हाथी के सामने खड़े सिंह को राजा बांयें पैर से कुचलने का प्रयास कर रहा है। मुख खोले सिंह हाथी के पैर को काटने का प्रयास कर रहा है, अस्पष्ट एवं अधूरा लेख "क्षत" लेखांकित है। पृष्ठभाग पर बांयें हाथ में नालयुक्त कमल तथा दाहिने हाथ में अस्पष्ट वस्तु लिऐ हुए है। जिसे सामने स्थित मयूर देख रहा है। इस पर "सिंहनिहन्ता महेन्द्रगजः" लेखांकित है। कुमारगुप्त द्वारा जारी "अप्रतिघ शैली" के सिक्कों का भार 121 ग्रेन के मध्य तथा व्यास 0.72 से 0.75 इंच तक है। इसके अग्रभाग पर "अप्रतिघ" लेखांकित है। धोती धारण किये हुए एक पुरूष प्रार्थना–मुद्रा में हाथ जोड़े खड़ा है, जिसके दाहिनी ओर वितर्क मुद्रा में दाहिना हाथ ऊपर उठाये तथा बांयां हाथ कमर पर रखे, साड़ी व चोली धारण किये एक स्त्री का चित्रांकन है। पुरूष के बांयीं ओर दाहिने हाथ में गरूड़ध्वज तथा बांयें हाथ में ढाल तथा टोपी धारण किये एक पुरूष की आकृति है। तीनों आकृतियाँ प्रभामण्डल रहित हैं, तथा "कुमारगुप्तः" लेखांकित है। पृष्ठभाग पर विन्दु–वृत्त में दाहिने हाथ में कमल लिए प्रभामण्डलयुक्त लक्ष्मी कमल पर आसीन हैं, साथ ही 'अप्रतिघ' लेखांकित है। अल्टेकर ने बीच के व्यक्ति को कुमारगुप्त उसके दाहिनी ओर की आकृति को रानी तथा बांयीं ओर की आकृति को युवराज व सेनापति माना है। दोनों राजा को कुछ समझा रहे हैं।

समुद्रगुप्त, चन्द्रगुप्त द्वितीय तथा कुमारगुप्त की स्वर्ण मुद्राओं में जो सुन्दरता व विविधता दिखलायी पड़ती है, वह स्कन्दगुप्त के शासन काल में समाप्त होती प्रतीत होती है। अधिक सम्भव है कि इसका कारण स्कन्दगुप्त की विषम राजनैतिक परिस्थितियाँ रही हों। स्कन्दगुप्त द्वारा जारी धनुर्धारी शैली की मुद्रायें 132 से 144 ग्रेन की हैं, जिनका व्यास 0.75 से 0.85 इंच के मध्य है। इस शैली के सिक्कों के अग्रभाग पर पायजामा, कोट, जूता, हार, कुण्डल आदि धारण किये राजा बांयें हाथ में धनुष व दाहिने हाथ में वाण लिए चित्रांकित है जिसके पीछे गरूड़ध्वज है तथा "जयति महीतलम सुधन्वी" लेखांकित है।[153] पृष्टभाग पर प्रभामण्डलयुक्त लक्ष्मी दाहिने हाथ में पाश व बांयें हाथ में कमल लिए कमलासीन हैं, साथ ही "श्री स्कन्दगुप्त" लेखांकित है। इसी शैली के कुछ सिक्कों पर "परमहितकारी राजा जयति दिवं श्री क्रमादित्यः" लेख मिलता है।[154] स्कन्दगुप्त द्वारा जारी यह सिक्के सबसे अधिक लोकप्रिय थे।[155] स्कन्दगुप्त द्वारा जारी सिक्कों की एक ऐसी शैली प्राप्त हुई है, जिसके नामकरण को लेकर विद्वान एकमत नहीं हैं। एलन ने इन सिक्कों को "राजा–लक्ष्मी" प्रकार नाम दिया है, जबकि स्मिथ ने "राजा–रानी" प्रकार। अल्टेकर ने एलन का समर्थन किया है। लेकिन किसी मुद्रा के अग्रभाग पर लक्ष्मी का अंकन नहीं मिलता है। सभी सिक्कों में पृष्ठभाग पर लक्ष्मी का अंकन है। अतः यह लक्ष्मी न होकर रानी ही होना चाहिए। इन सिक्कों का वजन 130 ग्रेन तथा व्यास .75 इंच है। अग्रभाग पर घुँघराले केश युक्त राजा को धोती व आभूषण धारण किये, दाहिने कन्धे पर रखे हुए धनुष को बांयें हाथ से पकड़े तथा वाण लिए चित्रांकित किया गया है। दाहिनी ओर आभूषण युक्त लक्ष्मी बांयें हाथ में नालयुक्त कमल और ऊपर उठे हाथ

में कोई वस्तु लिए हुए चित्रांकित हैं जिस पर राजा की दृष्टि केन्द्रित है। राजा व रानी के मध्य गरूड़ध्वज और अस्पष्ट लेख है। पृष्ठभाग पर प्रभामण्डलयुक्त कमलासीन लक्ष्मी के दाहिने हाथ में पाश और बांयें हाथ में कमल है तथा "स्कन्दगुप्त" लेखांकित है। स्कन्दगुप्त के उपरान्त पुरूगुप्त, नरसिंहगुप्त, बुद्धगुप्त, विष्णुगुप्त, वैन्यगुप्त, प्रकाशादित्य आदि के सिक्के भी मिलते हैं।

गुप्त साम्राज्य के पतन के उपरान्त भारत मे अनेक स्वतन्त्र राज्यों की स्थापना हुई, जिसमें कन्नौज के मौखरि तथा वर्द्धन राजवंश प्रमुख हैं। मौखरि राजाओं में ईशानवर्मन (550–576ई०), सर्ववर्मन (576–580ई०) तथा अवन्तिवर्मन (580–600ई०) की मुद्रायें प्राप्त होती है। जहाँ तक मौखरियों के सिक्कों की शैली का प्रश्न है मौखरि नरेश ईशानवर्मन, सर्ववर्मन व अवन्तिवर्मन ने गुप्त शासकों के चाँदी के सिक्कों का अनुकरण किया।[156] इनकी मुद्राओं पर प्रमुख प्रतीकांकन पंखयुक्त मोर है। मौखरि नरेशों के सिक्कों का ढेर भिटौरा (फैजाबाद) नामक स्थान से प्राप्त हुआ है। इन रजत मुद्राओं के अग्रभाग पर राजा की आवक्ष आकृति का अंकन है जिसके सामने अंकों में तिथि अंकित है। पृष्ठभाग पर पंखयुक्त मयूर की आकृति तथा उपाधि सहित राजा का नाम उत्कीर्ण है। उल्लेखनीय है कि सभी सिक्कों पर तिथि का अंकन प्राप्त होता है।

मौद्रिक विनिमय का विशुद्ध भारतीय स्वरूप

भारतीय इतिहास में मौद्रिक विनिमय का विशुद्ध भारतीय स्वरूप देखने को मिलता है। कौटिल्य के अर्थशास्त्र से स्पष्ट संकेत मिलता है कि राज्य में मुद्रायें जारी

करना किसी कानूनी निविदा पर ही निर्धारित नहीं था, अपितु वह विनिमय का माध्यम मात्र था। धातु की वरीयता के आधार पर विभिन्न क्षेत्रों से सोने या चाँदी की सिल्लियों की शुद्धता व निर्धारण का कार्य सम्पूर्ण रूप से कानूनी टेन्डर के द्वारा ही निर्धारित होता था।[157] स्पष्ट रूप से वे मुद्रायें जो व्यक्तिगत बनवायी जाती थीं, उनका प्रत्यक्ष मूल्य ही मान्य था। राज्य के अधिकारियों द्वारा प्रोत्साहित व हतोत्साहित करने जैसी स्थिति में सिक्कों के प्रत्यक्ष मूल्य पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता था। अर्थशास्त्र में कहा गया है कि राज्य सरकार ने सोने की निविदा के लिए कोई बाध्यता नहीं रखी थी। यदि उचित ढंग, वजन तथा प्रमाणित सिक्कों का चलन पहले के राजाओं व उनके राजवंशो के समय से ही रहा हो तो किसी कानूनी निविदा को सिक्कों को ढालने की अनुमति कदापि नहीं थी, लेकिन शर्त यह थी कि सिक्के पर्याप्त मात्रा में खजाने में उपलब्ध हों। किन्तु चाँदी तथा ताँबे के सिक्कों के मुद्रण की स्थिति सोने के सिक्कों से अलग थी। इन धातुओं के सिक्कों का मुद्रण राज्य के कानूनी तौर तरीके से होता था और उसकी शुद्धता भी प्रमाणित थी। अर्थशास्त्र की यह पंक्तियाँ उपरोक्त तथ्यों को और स्पष्ट कर देंगी :–

"लक्ष्णाध्यक्ष, रूपरूप अर्थात चाँदी के सिक्कों के निर्माण में चार भाग ताँबा तथा $1/16$ भाग तीक्ष्ण, त्रपु, सीस, अंजन आदि धातुओं में से किसी एक का समिश्रण करके बनायेगा। एक पण, आधा पण, चौथाई पण तथा $1/8$ पण की इकाई में सिक्कों का निर्माण किया जायेगा। ताम्र रूप अथवा ताँबे के सिक्कों में चारों भाग मिस्रित धातुओं का होगा और उनमें माषक, काकिणी, अर्द्धकाकिणी इकाइयों का निर्माण किया जायेगा। रूपदर्शक विनिमय के माध्यम तथा लीगल टेन्डर के रूप में कोश प्रवेश्य

मुद्रा का नियमन करेगा। सिक्कों पर लिया जाने वाला अदेय 8% होगा और इसे रूपिक कहा जायेगां, 5% अदेय की ब्याजी कहा जायेगा तथा $\frac{1}{8}$% को परीक्षिक या परीक्षण शुल्क कहा जायेगा, और इस सम्बन्ध में अपराधियों पर 25 पण जुर्माना किया जायेगा। यह जुर्माना सरकारी निर्माताओं, विक्रताओं, क्रेताओं एवं परीक्षकों पर नहीं लगाया जायेगा।[158] अर्थशास्त्र की उपरोक्त पंक्तियाँ यह स्पष्ट साक्ष्य प्रस्तुत कर रही हैं कि टकसाल तथा मौद्रिक विनिमय की एक विशिष्ट तथा मौलिक भारतीय परम्परा रही है जिसमें वैदेशिक तत्वों को कोई स्थान नहीं दिया गया था।

भार पद्धति एवं धातु

प्राचीन भारतीय इतिहास में सोना, चाँदी तथा ताँबा जैसी धातुएं मुद्रा निर्माण में प्रयुक्त मुख्य धातुएं थीं। अर्थशास्त्र यह साक्ष्य प्रस्तुत करता है कि सोने के सिक्कों का आम चलन नहीं था, यद्यपि व्यक्तिगत रूप से लोग सोने की सिल्लियाँ खरीद कर सोनार या टकसाल से सिक्के बनवाते थे, जिनकी प्रमाणिकता की जिम्मेदारी टकसालों की थी। सामान्यता कार्षापण सोने, चाँदी व ताँबे का होता था। सोने के कार्षापण व निष्क का भार 89 रत्ती था, ताँबे के कार्षापण का भार 100, 150, कभी–कभी 35 रत्ती मिलता है।[159] यद्यपि सोने चाँदी तथा ताँबे के सिक्कों का भार सदैव एक जैसा नहीं रहा। इसलिए यह आवश्यक हो जाता है कि उनके आनुपातिक मूल्य भी भिन्न–भिन्न हों। नासिक गुहालेख[160] में 70,000 कार्षापण (चाँदी) को 2000 स्वर्ण सिक्कों के बराबर बताया गया है। वजन मान पर महत्वपूर्ण प्रकाश डालते हुए मनुस्मृति के टीकाकार मेधातिथि[161] ने लिखा है कि देश के विभिन्न क्षेत्रों में

भिन्न–भिन्न भार पद्धति का अस्तित्व था, इसलिए उनके बीच आनुपातिक सामंजस्य स्थापित करना आवश्यक था जिससे उन क्षेत्रों के व्यापारियों का आपस में क्रय–विक्रय सम्बन्धी कोई कठिनाई न हो। अतः विभिन्न क्षेत्रीय वजन मान की विभिन्नताओं की निवृत्ति के लिए सम्बन्धित आनुपातिक नियम स्थापित किये गये। मनुस्मृति में भार का परिमाण ऋसरेण, सुवर्ण, निष्क एवं धरण मिलता है। सोने का पैमाना– 8त्रसरेणु= 1लिक्षा, 3लिक्षा= 1 राज सर्षप, 3राज सर्षप= 1गौर सर्षप, 6गौर सर्षप= 1यव, 3यव= 1कृष्णल, 5कृष्णल= 1माष, 12माष= अर्द्धअक्ष, अर्द्धअक्ष एवं चार माष या 16 माष= 1सुवर्ण, 4सुवर्ण= 1निष्क= 320 कृष्णल। चाँदी का पैमाना– 2कृष्णल= 1रूप्य माष, 16माष= 1धरण।[162]

कुमारगुप्त प्रथम के बैग्राम ताम्रपत्र अभिलेख[163] जिसका समय 448 ई० है, में मौद्रिक अनुपात 16 रूपक= 1दीनार बताया गया है। लेकिन इस काल में रूपक और दीनार का भार क्रमशः (शक क्षत्रप एवं कुषाणों की मुद्राओं का भार) लगभग 20 रत्ती या 36 ग्रेन, 118 से 124 ग्रेन मिलता है। इस आधार पर सोने तथा चाँदी का वास्तविक धात्विक अनुपात लगभग 5:1 (4.8:1) आता है। छठी शताब्दी ई० में यही धात्विक अनुपात 4:1 मिलने लगता है, क्योंकि स्वर्ण सिक्कों का भार लगभग 140–144 ग्रेन हो जाता है। ब्रहस्पतिस्मृति[164] में दीनार का भार 121 ग्रेन तथा कर्ष (ताम्र मुद्रा) का भार 144.4 ग्रेन है। 48 कार्षापण (ताम्र मुद्रा) के मूल्य के बराबर एक दीनार (स्वर्ण मुद्रा) बताया गया है। इस आधार पर ताम्र व स्वर्ण का अनुपात 56:1 अनुमानित है, लेकिन यह अनुपात सैद्धान्तिक मात्र है क्योंकि वास्तव में चन्द्रगुप्त द्वितीय की ताम्र मुद्राओं का वजन 84.3 ग्रेन व 87 ग्रेन है।[165] कुमारगुप्त व स्कन्दगुप्त

के सिक्के भी लगभग इसी भार के हैं।[166] स्कन्दगुप्त के ताम्र सिक्के 87 ग्रेन, 57 ग्रेन, 49 ग्रेन, 44 ग्रेन, 35 ग्रेन, 25 ग्रेन के हैं। लेकिन उनका मानक भार 84 ग्रेन, 56 ग्रेन, 48 ग्रेन, 42 ग्रेन, 36 ग्रेन तथा 24 ग्रेन है। इस आधार पर गुप्त काल में ताँबे तथा सोने का अनुपात लगभग 179:1 (8×256=21504÷120=179:1) निकलता है।

अतः यह बात बिल्कुल स्पष्ट हो जाती है कि यूनानी आक्रमण से बहुत पूर्व ही भारतीयों के पास बहुमूल्य धातुओं की अपनी देशी मुद्रा थी। जो प्रतीक चिह्नों, भारमान, धात्विक अनुपात व मौद्रिक विनिमय जैसे विभिन्न क्षेत्रों में अपनी विशिष्ट मौलिकता से सम्पन्न थी। इस सम्बन्ध में एलन का कथन महत्वपूर्ण है कि "प्रारम्भिक भारतीय सिक्कों जैसे कार्षापण अथवा आहत सिक्कों और यूनानी सिक्कों के मध्य कोई सम्पर्क नहीं था।" उल्लेखनीय है कि मुद्रा प्रचलन की देशी विधि में शासकों का नाम तथा उनकी आकृति का अंकन नहीं मिलता, का नेतृत्व आहत सिक्के करते हैं। इसके अतिरिक्त भारतीय पृष्ठभूमि से सन्दर्भित प्रतीक चिह्नों को चित्रांकित किया गया है। लेकिन इस बात से भी इन्कार नहीं किया जा सकता है कि मुद्रा निर्माण परम्परा के विकास को समय–समय पर आने वाली हिन्द–यवन, शक, पह्लव, कुषाण तथा रोमन जैसी विदेशी पद्धतियों एवं परम्पराओं ने यहाँ की देशी मुद्रा को सन्दर्भित एवं प्रभावित किया।

सन्दर्भ एवं टिप्पणी

1- पी.एल. गुप्ता– 'भारत के पूर्व– कालिक सिक्के', पृष्ठ–125।

2- उपरिवत् – पृष्ठ – 24।

3- उपरिवत् – पृष्ठ – 20–21।

4- जे.आई एन एस – 15, पृष्ठ – 261।

5- पी.एल. गुप्ता – 'भारत के पूर्व – कालिक सिक्के' – पृष्ठ – 21।

6- उपरिवत् – पृष्ठ – 25।

7- विसुद्धिमग्ग, 14 वाँ परिच्छेद।

8- अर्थशास्त्र – अनुवादित – शामाशास्त्री – पृष्ठ – 95–96।

9- पी.एल. गुप्ता – 'भारत के पूर्व–कालिक सिक्के' – पृष्ठ – 46।

10- उपरिवत् – पृष्ठ – 25।

11- एलन – बी.एम.सी.ए ८ – पृष्ठ – 11–84।

12- पी.एल. गुप्ता – अमरावती होल्ड ऑफ सिलवर पंचमार्क्ड क्वाइन्स, हैदराबाद, 1963।

13- एम.के. सरन – ट्राईबल क्वाइन्स : ए. स्टडी– पृष्ठ – 133।

14- पी.एल. गुप्ता – अमारवती होल्ड सिलवर पंचमार्क्ड क्वाइन्स, हैदराबाद – 1963।

15- उपरिवत्।

16- पी.एल. गुप्ता – प्राचीन भारतीय मुद्रायें – पृष्ठ – 49।

17- पी.एल. गुप्ता – 'भारत के पूर्व–कालिक सिक्के' – पृष्ठ – 46।

18- वासुदेव उपाध्याय – ''प्राचीन भारतीय मुद्रायें'' – पृष्ठ – 49।

19- एम.के. सरन – 'ट्राईबल क्वाइन्स : ए स्टडी' – पृष्ठ – 206।

20- जॉन मार्शल – 'मोहनजोदड़ों एण्ड इन्डसवैली' – पृष्ठ – 63–65।

21- वैदिक इण्डेक्स ऽ – पृष्ठ – 33।

22- अथर्ववेद ट –4.3।

23- ऐतरेय ब्राह्मण – टप्प –30.33।

24- छान्दोग्यउपनिषद् – टप्प –5.3।

25- पी.एल. गुप्ता –'भारत के पूर्व कालिक सिक्के' पृष्ठ – 87।

26- उपरिक्त् – पृष्ठ – 87।

27- उपरिवत् – पृष्ठ – 87।

28- उपरिवत् – पृष्ठ – 87।

29- उपरिवत् – पृष्ठ – 88।

30- उपरिवत् – पृष्ठ – 86।

31- वासुदेवशरण अग्रवाल – '' पाणिनि कालीन भारतवर्ष'' – पृष्ठ – 435।

32- पी.एल. गुप्ता – ''भारत के पूर्व–कालिक सिक्के'' – पृष्ठ – 38।

33- उपरिवत् – पृष्ठ – 86।

34- जे एन एस आई ग्गट ;प्द्ध च्–6।

35- स्मिथ – आई एम सी ऽ पृष्ट – 144, 154।

36- के.डी. वाजपेयी – '' इन्डियन न्यूमेस्मैटिक स्टडीज'' – पृष्ट – 96।

37– उपरिवत् – पृष्ट – 96।

38– कनिंघम – ''क्वाइन्स आफ ऐन्शियन्ट इन्डिया'' – पृष्ट – 93, 94।

39– स्मिथ – आई एम सी प्लेट ग्प्ए 17, 19।

40– एलन – 'बी.एम. सी. एएल, इन्ट्रो पृष्ठ – 89।

41– के.डी. वाजपेयी – ''इन्डियन न्यूमेस्मैटिक स्टडीज'' पृष्ठ – 37।

42– डी.सी. सरकार– सेलेक्ट इन्सक्रिप्शन्स–पृष्ठ – 95–97।

43– एलन – कैटलॉग ऑफ द क्वाइन्स ऑफ द एन्शियन्ट इन्डिया, लंदन – 150–54।

44– ए.एस. अल्टेकर – 'जे एन एस आई' पृष्ठ – 1–16, 133–145।

45– के.डी. वाजपेयी – 'इन्डियन न्यूमेस्मैटिक स्टडीज' – पृष्ठ –40।

46– इन्डियन न्यूमेस्मैटिक क्रॉनिकल, पटना, नं० 5।

47– के.डी. वाजपेयी – ''इन्डियन न्यूस्मैटिक स्टडीज'' पृष्ठ – 62।

48– उपरिवत् – पृष्ठ – 63।

49– ए.एस. अल्टेकर – 'द मघास ऑफ साउथ कोशल' वाल्यूम प् – पृष्ठ – 149।

50– एलन – कैटलॉग आफ द क्वाइन्स ऑफ द एन्शियन्ट इन्डिया, लंदन, पृष्ठ – 192–204।

51– जे एन एस आई – प्प् पृष्ठ – 115–6।

52– जे एन एस आई ग्ट पृष्ठ – 43–44।

53– उपरिवत् प्प्प् पृष्ठ – 79–82।

54– उपरिवत् प्टए पृष्ठ – 17–30।

55- उपरिवत् ट पृष्ठ – 17–18, 153।

56- उपरिवत् ग्ट पृष्ठ – 42,43।

57- जे.यू पी एच एस वाल्यूम ၩ

58- जे.एन.एस आई, ग्ग्प्ट प्लेट– प्ए

59- जे एन एस आई ग्ग्टꠠ पृष्ठ – 43–44।

60- उपरिवत्, ग्ग्प्टए पृष्ठ – 22, प्लेट – प, 4।

61- के.डी. वाजपेय – इन्डियन न्यूमेस्मैटिक स्टडीज पृष्ठ – 75,76।

62- जे.एन. बनर्जी – '' डी.एच आई, पृष्ठ – 131।

63- के.डी. वाजपेयी – 'इन्डियन न्यूमैटिक स्टडीज– पृष्ठ – 79।

64- किरण कुमार थपलियाल, व प्रशान्त श्रीवास्तव ''क्वाइन्स ऑफ एन्शियन्ट इन्डिया' पृष्ठ–62।

65- उपरवित् – पृष्ठ – 62,63।

66- भाष्कर चट्टोपाध्याय – ''क्वाइन्स एण्ड आईकॉनस'' पृष्ठ – 40।

67- एलन – 'बी एम सी' – पृष्ठ 169–179।

68- के.डी. वाजपेयी '' इन्डियन न्यूकेस्मैटिक स्टडीज'' पृष्ठ – 105।

69- किरण कुमार थपलियाल व प्रशान्त श्रीवास्तव – 'क्वाइन्स ऑफ एन्शियन्ट इन्डिया'' पृष्ठ–62।

70- देवेन्द्र हॉडा – ''स्टडीज इन इन्डियन क्वाइन्स एण्ड सील्स'' पृष्ठ – 64

71- कनिंघम – आर्कियोलोजिकल सर्वे ऑफ इन्डिया ।। पृष्ठ – 264।

72- उपरिवत् – पृष्ठ – 288।

73- उपरिवत् – पृष्ठ – 210।

74- ''एन्यूवल रिपोर्ट ऑफ द आर्कियोलॉजी डिपार्टमेन्ट – ग्वालियर स्टेट'' ;।जैथ्क्द्ध पृष्ठ – 17।
1940–41

75- कनिंघम – आर्कियोलोजिकल सर्वे ऑफ इन्डिया ग पृष्ठ – 37।

76- जे एन एस आई ग्टप्प पृष्ठ 42।

77- एस.के. भट्ट – सम्पादित ''स्टडीज इन द क्वाइनेज ऑफ मालवा'' पृष्ठ – 19।

78- जे.एन. एस आई. ग्टप्प पृष्ठ – 42।

79- उपरिवत् – पृष्ठ – 67।

80- एस.के. भट्ट – सम्पादित – ''स्टडीज इन द क्वाइनेज ऑफ मालवा'' पृष्ठ – 19।

81- एलन – बी एम सी, पृष्ठ – ब्सपपपपि

82- एस.के. भट्ट – सम्पादित – ''स्टडीज इन द कवाइनेज ऑफ मालवा'' पृष्ठ – 20।

83- किरण कुमार थपलियाल व प्रशान्त श्रीवास्तव – '' क्वाइन्स ऑफ एन्शियन्ट इन्डिया'' पृष्ठ – 62।

84- एस.के. भट्ट – सम्पादित ''स्टडीज इन द क्वाइनेज ऑफ मालवा'', वाल्यूम । पृष्ठ – 35।

85- उपरिवत् – पृष्ठ – 35।

86- इन्डियन आर्कियोलोजी : ए रिब्यू 196–61, पृष्ठ 55।

87- जे एन एस आई, ग्प्टए पृष्ठ – 61।

88- जे एन एस आई, ग्ग्प्ए पृष्ठ – 132।

ग्ग्ट पृष्ठ – 104।

89- जे एन एस आई, ग्ग्ट ;प्द्ध च्सण प्ट 5ण

90- उपरिवत्

91- अजीत रायजाद – "भारतीय सिक्कों का इतिहास", पृष्ठ –33।

92- रैप्सन – "इन्डियन क्वाइन्स", पृष्ठ –14।

93- अजीत रायजादा – भारतीय सिक्कों का इतिहास, पृष्ठ –28।

94- भाष्कर चट्टोपाध्याय – "क्वाइन्स एण्ड आइकान्स", पृष्ठ –33।

95- उपरिवत् – पृष्ठ –40, 58–59।

96- उपरिवत् – पृष्ठ –40।

97- वासुदेवशरण अग्रवाल – "पाणिनि कालीन भारतवर्ष", पृष्ठ –435।

98- एम.के. सरन – "ट्राईबल क्वाइन्स. ए स्टडी", पृष्ठ – 133।

99- जे. मार्शल – "मोहन जोदड़ो एण्ड इण्डस वैली", पृष्ठ –63–65।

100- एम. के. सरन – "ट्राईबल क्वाइन्स : ए स्टडी", पृष्ठ –139।

101- कवि तुलसी दास – "श्रीराम चरित मानस", उत्तरकाण्ड –8.1।

102- एम.के. सरन – "ट्राईबल क्वाइन्स : ए स्टडी", पृष्ठ –133।

103- स्मिथ – "आई एम सी", पृष्ठ –169।

104- जे.एन.एस.आई, ग्ट ;प्द्ध, पृष्ठ –5–6।

105- जे.एन.एस.आई, प्ट ;प्द्ध, पृष्ठ –26।

106- जे.एन.एस.आई, प्ट ;प्द्ध, पृष्ठ –27–28।

107- जे.एन.एस.आई, प्ट ;प्द्ध, पृष्ठ –70।

108- जी. याजदानी – सम्पादित –"दकन का प्राचीन इतिहास", पृष्ठ –766।

109- जे.डी.एच.सी., प्ट ;2द्ध, पृष्ठ –81।

110- उपरिवत्

111- ए बी आर आई, ग्ग्प्प्ए च्सण्ग्टण्16ण

112- ई सी डब्लू आई, 7ण

113- जे डी एच सी, प्प ;2द्ध, पृष्ठ –86।

114- जे एन एस आई ग्प ;1द्ध, पृष्ठ – 1–3।

115- बी. एम. सी., पृष्ठ –22।

116- ए.एस. अल्टेकर – "गुप्त कालीन मुद्रायें", पृष्ठ –1।

117- अजीत रायजादा – "भारतीय सिक्कों का इतिहास", पृष्ठ –85–86।

118- एलन – "कैटलॉग ऑफ द क्वाइन्स ऑफ द गुप्ता डायनेस्टी", पृष्ठ –114–118।

119- ए.एस. अल्टेकर – "न्यू सप्लीमेन्ट", पृष्ठ –105–111।

120- ए.एस. अल्टेकर – "क्वाइन्स ऑफ द गुप्ता एम्पायर", पृष्ठ –26–28।

121- उपरिवत् –पृष्ठ –39।

122- एलन – "कैटलॉग ऑफ द इन्डियन क्वाइन्स", जी.डी., पृष्ठ,1–2।

123- अजीत रायजादा – "भारतीय सिक्कों का इतिहास", पृष्ठ –87।

124- उपरिवत् –पृष्ठ, 88–89।

125- एलन – "कैटलॉग ऑफ द इन्डियन क्वाइन्स", जी.डी., पृष्ठ, 6।

126- उपरिवत् – पृष्ठ –12।

127- कात्यायन श्रौतसूत्र – 23/8।

128- तैत्तिरीय संहिता –4.6।

129- एलन – "कैटलॉग ऑफ द इन्डियन क्वाइन्स", जी.डी., पृष्ठ, 21।

130- ज.रा.सो.बं., 1884, पृष्ठ –177।

131- ज.रा.सो.बं., 1989, पृष्ठ –24।

132- अजीत रायजादा – "भारतीय सिक्कों का इतिहास", पृष्ठ –93।

133- ज.अ.ओ. सो. – 1930, पृष्ठ –244।

134- अजीत रायजादा – "भारतीय सिक्कों का इतिहास", पृष्ठ –95।

135- एलन – "कैटलॉग ऑफ द इन्डियन क्वाइन्स", जी.डी. –पृष्ठ –24।

136- उपरिवत् – पृष्ठ –25।

137- उपरिवत् – पृष्ठ –38–42।

138- एलन – "कैटलॉग ऑफ द इन्डियन क्वाइन्स", जी.डी. –पृष्ठ –44।

139- उपरिवत् – पृष्ठ –43।

140- एलन – "कैटलॉग ऑफ द इन्डियन क्वाइन्स", जी.डी. –पृष्ठ –45।

141- उपरिवत् – पृष्ठ –35।

142- उपरिवत् – पृष्ठ –34।

143- टामस – जे.ए.ए.एस. –1893, पृष्ठ –42।

144- एलन – "कैटलॉग ऑफ द इन्डियन क्वाइन्स", जी.डी. –पृष्ठ –33।

145- अहिर्बुन्ध्य संहिता – 41.37, (चक्ररूपी स्वयं हरिः)।

146- अजीत रायजादा – "भारतीय सिक्कों का इतिहास", पृष्ठ –109।

147- राखालदास बनर्जी – "द एज ऑफ इम्पीरियल गुप्ताज", पृष्ठ –230।

148- ए.एस. अल्टेकर – "गुप्त कालीन मुद्रायें", पृष्ठ –138।

149- अजीत रायजादा – "भारतीय सिक्कों का इतिहास", पृष्ठ –115।

150- एलन – "कैटलॉग ऑफ द इन्डियन क्वाइन्स", जी.डी. –पृष्ठ –88।

151- उपरिवत् – पृष्ठ –88।

152- अ.ए.साड. बं. –1917, पृष्ठ –155।

153- ए.एस. अल्टेकर – "गुप्त कालीन मुद्रायें", पृष्ठ –170।

154- ज.रा.ए.सो, – 1893, पृष्ठ –125।

155- अजीत रायजादा – "भारतीय सिक्कों का इतिहास", पृष्ठ –123।

156- वासुदेव उपाध्याय – "भारतीय सिक्के", पृष्ठ –180।

157- ओम प्रकाश – "कानशेप्च्युलाइजेशन एण्ड हिस्ट्री", पृष्ठ –127।

158- शामा शास्त्री – अनुवादित, "अर्थशास्त्र", पृष्ठ –95–96।

159- जे.एन.एस.आई – ग्ग्टए पृष्ठ – 269।

160- डी.सी. सरकार –सेलेक्ट इन्सक्रिप्शन्स, जिल्द – 1, पृष्ठ – 157।

161- टप्पए पृष्ठ – 131।

162- उपरिवत् – पृष्ठ – 132–135।

163- डी.सी. सरकार –सेलेक्ट इन्सक्रिप्शन्स, जिल्द – 2, पृष्ठ – 343।

164- टप्प्ए पृष्ठ – 9,10।

165- यू.एन. राय – ''गुप्त सम्राट एवं उनका युग'' पृष्ठ – 251।

166- ''क्वाइनेज इन एन्शियन्ट इन्डिया – पृष्ठ – 184।